VAAGDHARA

वातें वाग्धारा नी

जून 2026

अंक 73

VAAGDHARA

प्यारे किसान, भाइयों–बहनों, स्वराजी साथियों, प्यारे बच्चों , संगठन के पदाधिकारी, वाते पत्रिका के पाठको, आप सभी को जय गुरु! जय स्वराज !!

जैसा की हमारे लिए नई ऋतु आने वाली होती है गर्मी का मौसम बहुत महत्वपूर्ण होता है और आप सभी लोग नोतरे, बांगडे कार्यक्रम, शादियाँ उन सब में व्यस्त रहे होंगे और व्यस्त होंगे तो निश्चित ही अपने खेती के कार्य को लेकर कितना समय दे पाए, परंतु जैसे की अंत माह के अंक में आग्रह किया था की पुनः आपसे आग्रह के साथ मेरी बात शुरू करता हूं कि अगर हम जुताई नहीं कर पाए तो सर्वप्रथम हम अपने खेतों की जुताई करें और इतनी गहरी भी न करें कि हमारे उपजाऊ मिट्टी नीचे चली जाए और इतनी भी ऊपरी–ऊपरी न करें कि सूरज की गर्मी मिट्टी को तपा ना सके। बारिश का पानी अंदर उतर न सके तो हमें समानता से हमारे खेतों की जुताई करनी है।

चूँकि पिछले दिनों मेरी एक चर्चा के दौरान मुझे किसी व्यापारी ने मजाक मजाक में यह कहा कि आप यह नोतरो पर कुछ काम नहीं करते हैं क्या ! जब आदिवासी चंचल में वाग्धारा काम करता है तो नोतरो पर आपने कभी काम करने का नहीं सोचा, इसे बंद करवाने के बारे में नहीं सोचा, क्यों नहीं बंद करवाते हो तो मुझे चिंता हुई कि किस प्रकार से एक व्यापारी अलग तरीके की सोच से बोलता हैं तो मैने उनसे पूछा क्यों आपको क्या समस्या है, आप इसे नकारात्मक मत लीजिए। मैं इसे सकारात्मक ले जाने को कह रहा हूं कि इससे आर्थिक भार बहुत पड़ता है हमारे परिवारों मै इस पत्रिका के माध्यम से इस विषय को केवल मात्र आप तक खोलना चाह रहा हूं कि क्या हमारे पूर्वज इसे भार के रूप में शुरू करके गए थे या मदद के रूप में और क्या हमें नोतरा की राशि हमारे परिवार को मदद करती है या तकलीफ देती है। हमे इसे सोचना होगा और अगर यह मदद करती है तो क्या हम इसका समुचित उपयोग कर पाते हैं या नहीं कर पाते है। यह हमें विशेष रूप से समझना होगा अगर हम नहीं कर पाते हैं तो यह हमारी कमी है, ना कि हमारी परंपरा की, ना कि हमारे रिवाजो कि मैं शुरू से यह मानता रहा हूं कि नोतरा एक अच्छी परंपरा है यह एक हमें सामाजिक रूप से आर्थिक मदद करती है और यह हमारी परंपरा में आर्थिक मदद के तौर पर आई थी चाहे वह घर बनाने में, मवेशी लाने में, शादी मोसर जैसे कार्यक्रमो में हमारी आर्थिक मदद मिलती है। परंतु हम अगर उसे नौकरी की राशि का सही तरीके से प्रबंध नहीं करते हैं तो वह नुकसान हो जाते हैं और हम उसे आने वाली आजीविका या उस पैसे को हम वापस उपयोग में कितना ला पा रहे हैं वह हमारे लिए महत्वपूर्ण है यह हमें सोचना होगा और इस परंपरा को सकारात्मक रूप से आने वाली पीढ़ियों तक पहुंचाने हेतु ऐसा सही प्रबंधन करना होगा।

चूँकि शायद हम अगले अंक तक मिले तब तक आप बुवाई कर चुके होंगे। हमें विशेष रूप से देखना होगा कि हमें किस प्रकार से हम हमारे विविधता को बचा करके रख सकते हैं। हमारे बीजों की विविधता को बचा के रख सकते हैं। हम हमारी खेती की विविधता को कैसे बचा कर रख सकते हैं। हम ज्यादा रिस्क नहीं लेते हुए कृषि किस प्रकार से कर सकते हैं अगर हम केवल मात्र एक प्रकार की ही खेती करेंगे तो हमारे बरसात की खेती क्योंकि ऐसा माना जाता है कि बहुत ही रिस्की होती है बहुत ही मौसम आधारित होती है और मौसम आधारित कृषि की एक विशेषता है कि हमें अलग–अलग प्रकार की फसलों को साथ में करना चाहिए जिससे कि किसी भी प्रकार का संघर्ष एकमात्र फसल को ना करना पड़े अगर हम अलग–अलग प्रकार की फसले करेंगे तो वह अधिक बारिश होने पर भी हमें मदद कर सकती है या कम बारिश होने पर भी हमें मदद कर सकती है तो हम इस प्रकार से हमारी पीढ़ियों को संरक्षित कर सकते हैं , हम हमारी विविधता को बचाए रख सकते हैं, हमारी आजीविका को सुरक्षित रख सकते हैं और मौसम के प्रभाव के साथ जी सकते हैं, हमें हमारी परंपरा के हांगडी खेती के तरीके , हमारे खाने की जितनी विविधता होती है वह हमें वर्षा ऋतु में विशेष रूप से मिलती है तो उसे बचाने के तरीके संभालने होंगे।

अंत में यह मौसम हमारा आने वाली वानिकी, हमारे जंगलों का मौसम होता है, क्योंकि हमेशा मेरा यह आग्रह रहा है की हर परिवार पांच प्रकार के पौधे भी रख पाएगा तो मदद मिलेगी तो मैं इससे हट करके आपसे आग्रह करना चाहूंगा कि प्रत्येक परिवार प्रत्येक इंसान संगठन का साथी और ग्राम स्वराज समूह के साथी इस विषय को जरूर देखें और समझे कि हमारे परंपरा में कितने प्रकार के पेड़ हुआ करते थे कितनी विविधता थी आज से 10 साल, 20 साल 30 साल 50 साल या 100 साल पहले हमारे कौन–कौन से पेड़ होते थे और हमारे गांव में कौन से लुप्त हो गए। हमारे फले में कौन से लुप्त हो गए। हमारे घर में कौन से लुप्त हो गए है।

हम अगर संकल्प लेकर के उन वृक्षों के विविधता को वापिस स्थापित कर पाए तो हम हमारे आने वाली पीढ़ियों को सुरक्षित रख पाएंगे अन्यथा हमारी पीढ़ियां उन प्रजातियों को भूल जाएगी या पहचान नहीं पाएगी और वह खो जाएंगे। इसी आग्रह के साथ आपको पुनः आने वाली फसल के लिए, आने वाले माह के लिए, आपकी मेहनत के लिए, आपके संकल्प के लिए शुभकामनाएं...

जय स्वराज।

आपका अपना
जयेश जोशी

आया मेघ, जागी उम्मीद : मानसून का स्वागत और आदिवासी किसान की तैयारी

आया मेघ, जागी उम्मीद : (धरती पुकार रही थी, आसमान ने सुना : जल–जंगल –जमीन के रखवालों के लिए यही बेला है खेत सँवारने की) राजस्थान, मध्यप्रदेश और गुजरात के आदिवासी अंचलों में जून का महीना केवल ऋतु–परिवर्तन नहीं, बल्कि पूरे वर्ष की आशा का द्वार होता है। जब दक्षिण–पश्चिम मानसून केरल से चलकर धीरे–धीरे उत्तर की ओर बढ़ता है, तब डूँगरपुर, बाँसवाड़ा, प्रतापगढ़, झाबुआ और दाहोद के पहाड़ी गाँवों में किसान आँखें उठाकर आसमान ताकने लगते हैं। इस बार मौसम विभाग ने जून के दूसरे सप्ताह तक मानसून के इन क्षेत्रों में पहुँचने का अनुमान लगाया है। लेकिन आदिवासी किसान केवल बारिश का इंतजार नहीं करते। वे उससे पहले ही खेत, बीज, औजार और परंपरा को तैयार कर लेते हैं।

मानसून से पहले की तैयारी

मई के अंतिम सप्ताह में ही गाँव की महिलाएँ देसी बीजों को छाँव में सुखाकर मटकों में भरने लगती हैं। मक्का, उड़द, मूँग और कोदो–कुटकी जैसी परंपरागत फसलें – जो कम पानी में भी जीवट दिखाती हैं। यह तैयारी का केंद्र होती हैं।

जल संरचनाएँ और मेड़बंदी

ग्राम स्वराज की दिशा में काम करते हुए समुदायों ने इस वर्ष मानसून से पहले खेतों की मेड़बंदी, नाड़ी–तालाब की सफाई और कंटूर ट्रेंच का काम पूरा किया है। यह काम केवल पानी रोकने के लिए नहीं, बल्कि मिट्टी की उर्वरता बनाए रखने और भूजल स्तर सुधारने के लिए भी जरूरी है।

देसी खेती और जलवायु अनुकूलन

जलवायु परिवर्तन के दौर में जहाँ बारिश की अनिश्चितता बढ़ रही है, वहाँ परंपरागत खेती के तरीके नया महत्त्व पा रहे हैं। मिश्रित खेती, जीवामृत का उपयोग और देसी बीजों की बुआई– ये सब मिलकर एक ऐसी खेती की नींव रखते हैं जो सूखे और अनिश्चित वर्षा दोनों में टिक सके। कृषि एवं आदिवासी स्वराज क्रियान्वयन इकाई ने इस वर्ष किसान मित्रों को वर्षा–कालीन फसल चक्र, जैव खाद निर्माण और मिट्टी परीक्षण का प्रशिक्षण दिया है।

मानसून–कालीन सावधानियाँ

1. बुआई तभी करें जब 50 मिमी से अधिक वर्षा हो चुकी हो।
2. पहली बारिश में जमीन को पकने दें – तुरंत बीज न डालें।
3. मेड़ों की जाँच करें, टूटी मेड़ें तुरंत मरम्मत करें।
4. पशुओं को ऊँचे व सुरक्षित स्थान पर रखें।
5. नाड़ी और तालाब में गंदगी न जाने दें।
6. देसी बीज पड़ोसियों से साझा करें।

फलदार वाड़ी और पोषण

मानसून का मौसम वाड़ी के पौधों के लिए भी वरदान है। आम, सीताफल, बेर और आँवले के पेड़ इस समय नई जड़ें पकड़ते हैं। वाग्धारा के फलदार वाड़ी कार्यक्रम से जुड़े परिवार इस मौसम में नए पौधे लगाने और पुराने पेड़ों की देखभाल की तैयारी में लगे हैं।

हलमा : श्रमदान से जल संरक्षण – परंपरा ने दिया जल–संकट का जवाब भील आदिवासी समाज की सामूहिक शक्ति से कुएँ की सफाई, गहरीकरण और नए जल स्रोतों का निर्माण हलमा – भील आदिवासी समाज की वह प्राचीन परंपरा जिसमें बिना किसी मजदूरी के पूरा गाँव मिलकर सामूहिक काम करता है। इस वर्ष मई 2026 में वाग्धारा और ग्राम स्वराज समूहों के साथ मिलकर झाबुआ, सैलाना (रतलाम), बाँसवाड़ा और डूंगरपुर, गुजरात के दाहोद क्षेत्र के कई गाँवों में हलमा के माध्यम से जल–संकट का समाधान निकाला गया।

सामूहिक भागीदारी – जमीनी तस्वीर इन कार्यक्रमों में महिलाओं की भूमिका विशेष रूप से उल्लेखनीय रही। रंग–बिरंगे वस्त्रों में सैकड़ों महिलाएँ सिर पर टोकरी और हाथ में कुदाल लेकर तालाब की पाल बनाती, मिट्टी ढोती और कुओं की सफाई करती दिखीं। यह केवल श्रम नहीं – यह अपनी जमीन, अपने जल और अपने भविष्य के लिए एकजुटता का जीवंत प्रमाण था। जल चौपाल लगाई गई, रैली निकालकर जल संरक्षण का संदेश दिया गया। गाँव–गाँव में हलमा की पुरानी गीत परंपरा के साथ ढोल बजाते हुए समुदाय एकत्रित हुआ और काम शुरू हुआ।

किए गए कार्य

1. कुओं की सफाई, मलबा निकालना व गहरीकरण
2. तालाब की पाल की मरम्मत व पत्थर जमाना
3. नाड़ी व जल स्रोतों के आसपास मिट्टी कटाव रोकना
4. नए जल स्रोत निर्माण हेतु खुदाई
5. जल संरचनाओं के आसपास पौधरोपण

हलमा के दूरगामी प्रभाव

- भूजल स्तर में सुधार – कुओं में स्वच्छ जल लौटा
- गर्मियों में पेयजल संकट में कमी
- तालाब भरने से पशुओं और फसलों को लाभ
- सामाजिक एकता और सामुदायिक विश्वास मजबूत

युवा पीढ़ी परंपरा से जुड़ी –

नई पहचान बनी जल, जंगल, जमीन और जन के रिश्ते को पुनर्जीवित करने वाला मौसम तपती धरती, सूखते जलस्रोत, मुरझाते खेत और आसमान की ओर उम्मीद भरी निगाहें – आदिवासी अंचलों में मानसून का आगमन केवल मौसम परिवर्तन नहीं, बल्कि जीवन के पुनर्जन्म का संदेश लेकर आता है। यहां बारिश केवल पानी नहीं लाती, बल्कि खेतों में हरियाली, जंगलों में जीवन, पशुधन के लिए चारा, परिवारों के लिए भोजन और समुदाय के लिए नई ऊर्जा लेकर आती है। आदिवासी समाज, जिसका जीवन जल, जंगल, जमीन और प्राकृतिक संसाधनों से गहराई से जुड़ा है, उसके लिए मानसून प्रकृति के साथ साझेदारी और सह–अस्तित्व का सबसे जीवंत प्रतीक है।

आदिवासी क्षेत्रों की आजीविका का बड़ा आधार वर्षा आधारित कृषि, लघु वनोपज, पशुपालन और प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर जीवनशैली है। ऐसे में मानसून का समय पर और संतुलित आगमन जीवन के हर पहलू को प्रभावित करता है। खेतों में मक्का, तुअर, उड़द, ज्वार, बाजरा और स्थानीय पारंपरिक फसलों की बुवाई इसी मौसम में होती है। महिलाएं बीजों को संजोती हैं, परिवार खेतों की तैयारी में जुटते हैं, और गांवों में सामूहिक श्रम की परंपराएं जीवंत हो उठती हैं। यह मौसम केवल खेती का नहीं, बल्कि सामुदायिक सहयोग, परंपरागत ज्ञान और प्रकृति के प्रति सम्मान का भी समय है।

कभी बारिश देर से आती है, कभी बहुत कम होती है, तो कभी अचानक अत्यधिक वर्षा से फसलें और मिट्टी दोनों बह जाती हैं। इसका सबसे अधिक असर उन्हीं समुदायों पर पड़ता है जिनके पास सिंचाई, पूंजी व वैकल्पिक आय के साधन सीमित हैं। ऐसे में मानसून केवल आशा नहीं, बल्कि चिंता का कारण भी बनता जा रहा है।

स्थानीय ज्ञान – जैसे मौसम के संकेतों को समझना, विविध फसल प्रणाली अपनाना और सामूहिक श्रमदान – आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं। आदिवासी समाज हमें यह भी सिखाता है कि प्रकृति केवल संसाधन नहीं, बल्कि जीवन साथी है। मानसून इस रिश्ते को और गहरा करता है। यह मौसम हमें याद दिलाता है कि स्थायी विकास का रास्ता प्रकृति के साथ संघर्ष में नहीं, बल्कि सहजीवन में है। जब समुदाय जल, जंगल और जमीन के संरक्षण का नेतृत्व करते हैं, तब केवल फसल नहीं, बल्कि स्वाभिमान, आत्मनिर्भरता और सामुदायिक स्वराज भी मजबूत होता है।

आज आवश्यकता है कि मानसून को आदिवासी अंचलों में जल स्वराज, मृदा स्वराज, बीज स्वराज और पोषण स्वराज के अवसर के रूप में देखा जाए। यह समय है हर बूंद को सहेजने का, स्थानीय ज्ञान को सम्मान देने का और समुदाय आधारित प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन को मजबूत करने का।

आइए, इस मानसून का स्वागत आदिवासी समुदायों की उस जीवनदृष्टि से करें, जो प्रकृति को पूजती ही नहीं, बल्कि उसके साथ संतुलित सह–अस्तित्व में विश्वास करती है। मानसून केवल बारिश नहीं – यह जीवन, संस्कृति, आजीविका और स्वराज का उत्सव है।

खेत की बात/फसल विधि

मानसून की पहली बूंद जब धरती को छूती है, तो वह केवल वर्षा नहीं होती – वह किसान और प्रकृति के बीच एक नई शुरुआत का संकेत होती है। खरीफ सीजन भारतीय किसान के जीवन का सबसे महत्वपूर्ण समय है। इस मार्गदर्शिका में बुआई से कटाई और भंडारण तक की हर जानकारी दी गई है ताकि हर किसान परिवार इस सीजन से अधिकतम लाभ उठा सके।

1. खरीफ की प्रमुख फसलें – बुवाई व कटाई सारणी

खरीफ सीजन में मक्का, बाजरा, धान, उड़द, मूंग, अरहर, ज्वार और तिल प्रमुख फसलें हैं। नीचे दी गई सारणी में प्रत्येक फसल का बुआई और कटाई का सही समय दिया गया है :

फसल	बुआई का समय	अवधि	कटाई का समय
मक्का	जून प्रथम सप्ताह	90–100दिन	अक्टूबर
बाजरा	जून–जुलाई	75–90दिन	सितंबर–अक्टूबर
उड़द	जून द्वितीय पखवाड़ा	65–75दिन	सितंबर
मूंग	जून अंत	60–70दिन	अगस्त–सितंबर
अरहर	जून–जुलाई	150–180दिन	नवंबर–दिसंबर
धान	नर्सरी जून, रोपाई जुलाई	120–135दिन	नवंबर
ज्वार	जून–जुलाई	90–110दिन	अक्टूबर
तिल	जुलाई प्रथम सप्ताह	75–85दिन	सितंबर–अक्टूबर

2. खरीफ फसल चक्र कैलेंडर – मई से नवंबर

नीचे दिए गए कैलेंडर में हर महीने के मुख्य कार्य और विशेष ध्यान देने योग्य बातें संक्षेप में दी गई हैं :

माह	मुख्य फसलें	प्रमुख कार्य	विशेष ध्यान
मई (अंत)	सभी खरीफ	गहरी जुताई, मेड़बंदी	बीज उपचार व चयन
जून (1st)	मक्का, बाजरा, ज्वार	पहली बारिश पर बुआई	मेड़ मजबूत करें
जून (2nd)	उड़द, मूंग, अरहर	मूंग–उड़द बुआई, धान नर्सरी	अंकुरण देखें
जुलाई	धान, मक्का, अरहर	धान रोपाई	पहली निराई–गुड़ाई
अगस्त	धान, मक्का, उड़द	दूसरी निराई, जीवामृत	कीट–रोग निगरानी
सितंबर	धान, अरहर, तिल	फूलदाना अवस्था देखभाल	रोग पहचान
अक्टूबर	मक्का, उड़द, तिल	कटाई	दाने सुखाएँ

3. खेत की तैयारी – अच्छी फसल की मजबूत नींव –

खरीफ फसल की सफलता का पहला कदम खेत की तैयारी है। सही तैयारी का मतलब केवल जुताई नहीं – यह मिट्टी को जीवंत, उपजाऊ और फसल के लिए अनुकूल बनाने की पूरी प्रक्रिया है।

गहरी जुताई – मानसून से 10–15 दिन पहले मिट्टी पलटने वाले हल से गहरी जुताई करें। इससे पुराने खरपतवारों की जड़ें कट जाती हैं, कीटों के अंडे नष्ट होते हैं और मिट्टी की वायु संचार क्षमता बढ़ती है।

मेड़बंदी – जुताई के बाद खेत के चारों ओर मजबूत मेड़ें बनाएँ। मेड़ें जितनी ऊँची होंगी, उतना अधिक वर्षा जल खेत में रुकेगा।

जैविक खाद – बुआई से एक सप्ताह पहले प्रति एकड़ 4–5 ट्रॉली गोबर खाद या 2 क्विंटल वर्मी कम्पोस्ट मिलाएँ। हरी खाद के लिए ढेंचा या सनई बोकर 45 दिन बाद पलट दें।

समुदाय सीख : खेत की तैयारी में जितनी मेहनत, पूरे सीजन में उतनी कम परेशानी।

4. बीज चयन और उपचार–स्वस्थ बीज, स्वस्थ फसल –

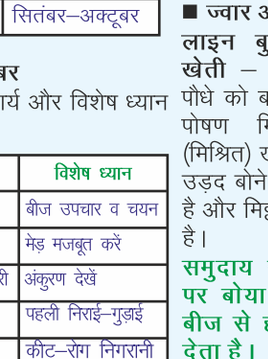

बीज चयन व उपचार मानसून से पहले ही कर लेना चाहिए। एक स्वस्थ, उपचारित बीज से शुरुआत ही फसल की सफलता की गारंटी है।

देशी बीज – हमेशा स्थानीय देशी बीजों को प्राथमिकता दें। ये बीज कम पानी में भी अच्छा उत्पादन देते हैं और बीमारियों के प्रति अधिक सहनशील होते हैं।

नमक–पानी परीक्षण – बाल्टी पानी में दो चम्मच नमक घोलें। जो बीज ऊपर तैरें–हटा दें। जो नीचे बैठें। वे स्वस्थ हैं। साफ पानी से धोकर छाँव में सुखाएँ।

जैविक बीज उपचार –

- **गोमूत्र उपचार :** बीजों को 2–3 घंटे गोमूत्र में भिगोएँ – फफूंद व जीवाणु रोगों से बचाव।
- **ट्राइकोडर्मा :** प्रति किलो बीज पर 5–10 ग्राम – मिट्टी जनित रोगों से सुरक्षा।
- **राख उपचार :** बीजों पर लकड़ी की राख – नमी बनाए रखती है, कीट दूर रखती है।
- **बीज प्राइमिंग** – धान के बीज 12 घंटे पानी में भिगोएँ, 24 घंटे छाँव में रखें।

समुदाय सीख : बीज उपचार में लगाए 30 मिनट पूरे मौसम की फसल को बचाते हैं।

5. बुआई – सही समय और सही तरीका

मानसून की पहली अच्छी बारिश का इंतजार करें। जब मिट्टी में 10–12 सेमी गहराई तक नमी पहुँचे, तब बुआई का सही समय है।

फसलवार बुआई का समय

- **मक्का और बाजरा :** जून पहला–दूसरा सप्ताह
- **उड़द और मूंग :** जून दूसरा–तीसरा सप्ताह
- **धान नर्सरी :** जून पहला सप्ताह रोपाई : जुलाई पहला–दूसरा सप्ताह
- **अरहर :** जून मध्य से जुलाई पहले सप्ताह तक
- **ज्वार और तिल :** जुलाई पहले सप्ताह तक

लाइन बुआई और हांगणी खेती – लाइन बुआई से हर पौधे को बराबर जगह, धूप और पोषण मिलता है। हांगणी (मिश्रित) खेती में मक्का के साथ उड़द बोने से जोखिम कम होता है और मिट्टी में नाइट्रोजन बढ़ती है।

समुदाय सीख : सही समय पर बोया बीज, देर से बोए बीज से हमेशा बेहतर फसल देता है।

6. सिंचाई और जल प्रबंधन : हर बूंद की कीमत –

वर्षा जल का संरक्षण और सही उपयोग इस सीजन की सबसे बड़ी कुशलता है।

फसल की अवस्था के अनुसार पानी

- **अंकुरण (0–10 दिन) :** लगातार नमी जरूरी
- **कल्ला फूटना (10–30 दिन) :** नमी बनाए रखें
- **फूल आना :** सबसे संवेदनशील समय – पानी की कमी से दाने नहीं बनते
- दाना भराई : पानी से दाने वजनदार बनते हैं
- पकने की अवस्था : कटाई से 10–15 दिन पहले सिंचाई बंद करें

पारंपरिक जल संरक्षण

- **मेड़बंदी :** वर्षा जल रोककर मिट्टी में गहराई तक नमी
- **मल्चिंग : पुआल/पत्तियों से 30–40** प्रतिशत अधिक समय तक नमी
- **खेत तालाब और जोहड़ :** सूखे में पूरक सिंचाई का स्रोत
- **कंटूर बंडिंग :** ढलान वाले खेतों में पानी रोकें

समुदाय सीख : वर्षा जल को खेत में रोकना – यही सबसे बड़ी सिंचाई है।

7. निराई–गुड़ाई और कीट–रोग प्रबंधन

निराई का सही समय – बुआई के 20–25 दिन बाद पहली और 35–40 दिन बाद दूसरी निराई करें। समय पर निराई न करने से उत्पादन 20–40: तक घट सकता है।

प्राकृतिक कीटनाशक

- **नीम घोल :** 5 किलो नीम पत्ती 10 लीटर पानी में – रस चूसने वाले कीटों पर असरदार
- **लहसुन–मिर्च अर्क :** 250 ग्राम लहसुन. 100 ग्राम मिर्च – माहू और थ्रिप्स पर
- **राख छिड़काव :** सुबह ओस के समय–कीट पत्तियों पर नहीं बैठते
- **पीला चिपचिपा जाल :** सफेद मक्खी और माहू के लिए
- **पक्षी आसन :** बाँस की छड़ियाँ – पक्षी कीट खाते हैं।
- **समुदाय सीख :** रासायनिक दवा अंतिम विकल्प हो, पहला नहीं।

8. पोषण प्रबंधन – जीवामृत

जीवामृत एक शक्तिशाली जैविक घोल है जो मिट्टी के सूक्ष्मजीवों को सक्रिय करता है।

जीवामृत बनाने की विधि

- 200 लीटर पानी में 10 किलो ताजा गोबर मिलाएँ
- 10 लीटर गोमूत्र डालें
- 2 किलो बेसन और 2 किलो पुराना गुड़ मिलाएँ
- एक मुट्ठी पुरानी उपजाऊ मिट्टी डालें
- 48 घंटे छाँव में रखें, हिलाते रहें
- 10 गुना पानी मिलाकर 15–20 दिन के अंतराल पर फसल पर छिड़कें

परिणाम : पौधों की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है, जड़ें मजबूत होती हैं और उत्पादन में 15–20 प्रतिशत की वृद्धि होती है।

9. कटाई – परिपक्वता की सही पहचान

सही समय पर कटाई न केवल उपज की मात्रा बल्कि उसकी गुणवत्ता भी सुनिश्चित करती है।

परिपक्वता की पहचान

- मक्का : छिलका सूखे और दाने कठोर हों
- बाजरा/ज्वार : बाली का 80 प्रतिशत सुनहरा–भूरा हो
- उड़द/मूंग : 70–80 प्रतिशत फलियाँ काली हों – देरी से फलियाँ फट जाती हैं।
- धान : 80–85 प्रतिषत दाने पकें, बाली झुके
- अरहर : 75 प्रतिशत से अधिक फलियाँ भूरी–काली हों

कटाई का तरीका – सुबह 6–10 बजे या शाम 4–6 बजे कटाई करें। कटाई के बाद छाँव में ढेर करें। 2–3 दिन के भीतर मड़ाई करें।

समुदाय सीख : परिपक्वता की पहचान सीखना किसान की सबसे कीमती दक्षता है।

10. भंडारण और बीज संरक्षण

भंडारण की तैयारी

- अनाज को 4–5 दिन धूप में सुखाएँ (नमी 12 प्रतिशत से कम)
- कोठी/बोरी को साफ करके धूप में सुखाएँ
- कोठी की दीवारों पर नीम पत्तों का लेप या राख की परत
- अनाज में नीम की सूखी पत्तियाँ मिलाएँ
- वायुरोधी ढँककर रखें

बीज संरक्षण – कटाई के समय सबसे स्वस्थ पौधों से बीज अलग चुनें। मिट्टी के घड़े या कपड़े की थैली में नीम पत्तियों के साथ ठंडी, सूखी जगह रखें। बीज बचाना किसान को बाजार से स्वतंत्र रखता है और अपनी फसल की विविधता बनाए रखता है।

समुदाय सीख–बीज बचाना हमारी परंपरा और हमारी शक्ति है।

सामाजिक मुद्दा (पलायन/बाल विवाह/बाल मजदूरी)

मांदल की थाप, शिक्षा का उजास "पलायन की राहों में बच्चों के सपने और शिक्षा का साथ"

01 पृष्ठभूमि–दक्षिणी राजस्थान, मध्य प्रदेश और गुजरात तीन राज्यों का त्रि–संगम तीनों राज्यों की सीमाओं के मिलन बिंदु पर स्थित है। यहाँ का भू–भाग मुख्यतः पहाड़ी, पठारी और वनाच्छादित है। अरावली पर्वतमाला की दक्षिणी श्रेणियाँ इस क्षेत्र की प्रमुख भौगोलिक पहचान है और क्षेत्र को ऊबड़–खाबड़ बनाती है। कई स्थानों पर छोटे–छोटे पहाड़, घाटियाँ और ढलानदार भूमि देखने को मिलती है। भूमि का अधिकांश भाग पथरीला एवं ढलानदार है। यहाँ पर गाँव प्रायः पहाड़ियों की तलहटी या छोटे पठारों पर बसे हुए हैं।

02 आदिवासी क्षेत्र में पलायन– पलायन के बाद भी परिवार को मजदूरी मिलती है, लेकिन स्थायी लाभ नहीं–शहरों में मजदूरी करने के बाद भी खर्च अधिक होता है। रहने, खाने, दवा और यात्रा में कमाई का बड़ा हिस्सा खर्च हो जाता है। और कोई स्थाई समाधान नही मिल पाता है । बार–बार पलायन से खेतों की देखभाल कम हो पाती है, मिट्टी सुधार, पशुपालन और खेती के नए तरीकों पर ध्यान नहीं जा पाता और खेती पीछे छूटने लगती है। जब बच्चे पढ़ नहीं पाते, तो आगे चलकर उन्हें भी कम मजदूरी वाले काम करने पड़ते हैं। अगली पीढ़ी भी मजदूरी में फँस जाती है और इससे गरीबी का यह कुचक्र चलता ही रहता है। आदिवासी क्षेत्रों में पलायन केवल रोजगार की खोज नहीं, बल्कि सामाजिक, आर्थिक, भौगोलिक और विकास संबंधी असमानताओं से जुड़ी एक जटिल प्रक्रिया है। तीन राज्यों के इस आदिवासी त्रि–संगम क्षेत्र में इसे विशेष रूप से देखा जा सकता है, जहाँ बड़ी संख्या में आदिवासी परिवार हर वर्ष जीविका के लिए अपने गाँव छोड़कर अन्य राज्यों और शहरों की ओर जाते हैं।

आदिवासी क्षेत्रों में परिवार या समुदाय अपने गाँव से अस्थायी या स्थायी रूप से रोजगार, भोजन, शिक्षा या बेहतर जीवन की तलाश में दूसरे स्थानों पर अधिकतर मौसमी पलायन **(Seasonal Migration)** करते हैं। क्षेत्र के किसानों के पास छोटी जोत के खेत, ढालू जमीन, वर्षा पर आधारित खेती, पानी की कमी, जंगलों में संसाधनों की घटती उपलब्धता और रोजगार के सीमित अवसरों के कारण पलायन करने को मजबूर हो जाते हैं। अक्सर पूरा परिवार साथ जाता है। यह पलायन कई नई समस्याएँ भी लेकर आता है। माता–पिता के साथ बच्चे भी ईंट–भट्टों, खेतों, फैक्ट्रियों या निर्माण कार्य वाले क्षेत्रों में पहुँच जाते हैं। इसका सबसे अधिक प्रभाव बच्चों की शिक्षा, स्वास्थ्य और पोषण पर पड़ता है।

03 परिवारों के पलायन से बच्चों पर पड़ने वाले प्रभाव

3.1 बच्चों की शिक्षा पर प्रभाव – बच्चों की पढ़ाई बीच में छूट जाती है–जब परिवार खेती के बाद मजदूरी के लिए बाहर जाता है, तो बच्चे शिक्षा से छूट जाते हैं। कई बच्चे महीनों तक पढ़ाई से दूर रहते हैं और फिर दोबारा स्कूल नहीं लौट पाते। इसका प्रभाव परिवार की लड़कियों पर अधिक देखा जा सकता है क्योंकि पलायन के दौरान लड़कियों को छोटे भाई–बहनों की देखभाल करना, पानी की व्यवस्था जुटाना, परिवार के सदस्यों के लिए भोजन तियार करना जैसे कई काम करने पड़ते हैं। और परिणामस्वरूप धीरे–धीरे उनकी पढ़ाई छूट जाती है।

3.2 विद्यालय से नियमित जुड़ाव का अभाव – लगातार अनुपस्थिति के कारण बच्चे या तो पढ़ा हुआ भूल जाते हैं, और अनियमितता के दौरान कक्षा में जिन अवधारणाओं से सम्बन्धित कार्य हुआ उसको सीखने से वंचित रह जाते हैं, बच्चों को सीखने में कठिनाई का सामना करना पड़ता है और धीरे–धीरे उनके सीखने का स्तर गिरने लगता है इस प्रकार से पढ़ाई में कमजोर होते बच्चे शिक्षा से दूर होने लगते हैं।

3.3 भाषा और माहौल की समस्या – माता पिता द्वारा पलायन करने के कारण जब दूसरे राज्यों की ओर गमन किया जाता है तब बच्चों को नई भाषा सीखने समझने और नए वातावरण में ढलने में परेशानी होती है। इस प्रकार से भाषा और माहौल की समस्या बहुत बड़ी समस्या बन जाती है। नई जगह पर नई भाषा के चलते बच्चे शिक्षक की बात समझ नहीं पाते, अपनी बात कहने में झिझकते हैं, कक्षा में चुप रहने लगते हैं, कई बार बच्चे उपहास का शिकार होते हैं, पढ़ाई में रुचि कम हो जाती है और भाषा की दूरी धीरे–धीरे बच्चों में हीन भावना पैदा कर सकती है।

04. बाल विवाह बढ़ने का खतरा– गरीबी और असुरक्षा की स्थिति में कुछ परिवार बेटियों को "जिम्मेदारी का बोझ" मानने लगते हैं। वे सोचते हैं बेटी की शादी कर देने से परिवार में **"एक सदस्य कम हो जाएगा" "शादी जल्दी कर देंगे तो खर्च कम होगा"** इस सोच के कारण कम उम्र में विवाह कर दिया जाता है। पलायन के कारण जब लड़कियाँ शिक्षा से वंचित हो जाती हैं तब अक्सर समुदाय में यह धारणा होती है"अब लड़की पढ़ नहीं रही, तो शादी कर दो।" और उनके विवाह की संभावना बढ़ जाती है। पलायन के दौरान अस्थायी बस्तियों और शहरों में परिवारों को बेटियों की सुरक्षा को लेकर डर रहता है। इस कारण भी कई परिवार जल्दी विवाह को "सुरक्षा" का उपाय मान लेते हैं। जबकि कुछ समुदायों में पहले से कम उम्र में विवाह की परंपरा रही है। लेकिन पलायन और आर्थिक अस्थिरता इस प्रवृत्ति को और बढ़ा देती है। सामाजिक दबाव और परंपराओं को निभाने के क्रम में बालिकाओं को बाल विवाह का शिकार होना पड़ता है। जिसका विपरीत प्रभाव और विशेष प्रभाव बालिकाओं के स्वास्थ्य, शिक्षा, कम उम्र में गर्भधारण, कुपोषण, घरेलू हिंसा का खतरा और आत्मनिर्भरता में कमी के रूप में देखा जा सकता है। शारीरिक और मानसिक विकास प्रभावित होता है, हिंसा और शोषण का खतरा बढ़ता है और बालिकाओं का बचपन समाप्त हो जाता है।

05.बाल श्रम को बढ़ावा – पलायन और बाल श्रम एक–दूसरे से गहराई से जुड़े हुए हैं। जब आदिवासी और ग्रामीण परिवार रोजगार की तलाश में अपने गाँव छोड़कर दूसरे स्थानों पर जाते हैं, तब बच्चों के श्रम में शामिल होने की संभावना बढ़ जाती है। क्योंकि जब परिवार शहरों या मजदूरी स्थलों पर पहुँचते हैं, तब उनकी आय सीमित होती है और खर्च बढ़ जाते हैं। ऐसी स्थिति में बच्चे भी परिवार की आय बढ़ाने का माध्यम बन जाते हैं। और बच्चों से ईंट ढोने, खेतों में काम करने, निर्माण कार्य में मदद करने, घरेलू काम, दुकानों और होटलों में काम करवाया जाने लगता है। कई कार्यस्थलों पर ठेकेदार पूरे परिवार को मजदूरी पर रखते हैं। ऐसी स्थिति में बच्चों से भी काम लिया जाता है, भले ही उन्हें औपचारिक मजदूर न माना जाए। उदाहरण के लिए ईंट–भट्टों पर मिट्टी तैयार करना, ईंटें उठाना, कृषि कार्यों में सहयोग करना, निर्माण सामग्री पहुँचाना आदि बच्चों का "सहयोग" धीरे–धीरे नियमित बाल श्रम बन

जाता है। कुछ ठेकेदार परिवारों को अग्रिम पैसा देकर काम पर ले जाते हैं। ऐसी स्थिति में पूरा परिवार **"बंधुआ जैसी स्थिति"** में काम करता है और बच्चे भी श्रम में शामिल हो जाते हैं। बच्चे सस्ते और आसानी से नियंत्रित श्रमिक माने जाते हैं, इसलिए उनका शोषण होने का खतरा अधिक रहता है।

लगातार पलायन और गरीबी के कारण कुछ परिवारों और समुदायों में बच्चों का काम करना सामान्य बात समझी जाने लगती है। ऐसी सोच विकसित हो जाती है कि **"बच्चा खाली क्यों बैठे?" "काम सीखेगा तो आगे काम आएगा।"** यह सोच बाल श्रम को सामाजिक स्वीकृति देने लगती है।

पलायन के दौरान बच्चे नियमित रूप से स्कूल नहीं जा पाते। क्योंकि नई जगह पर नया विद्यालय खोजने में समय जाता है और काम प्रभावित होता है, भाषा की समस्या, दस्तावेजों की कमी और बार–बार स्थान बदलने से उनकी शिक्षा पर विपरीत प्रभाव देखे जा सकते हैं। जब बच्चे लंबे समय तक पढ़ाई से बाहर रहते हैं, तो परिवार उन्हें काम में लगाने लगता है। धीरे–धीरे शिक्षा की जगह श्रम बच्चों की दिनचर्या बन जाता है। बच्चों का बचपन प्रभावित होता है और खेलने और सीखने की उम्र में बच्चे मजदूरी और जिम्मेदारियों में लग जाते हैं। इससे उनका आत्मविश्वास और मानसिक विकास के साथ उनका बचपन और शिक्षा दोनों प्रभावित होते हैं।

06. समुदाय की भूमिका – आदिवासी क्षेत्रों में बच्चों का शिक्षा से जुड़ाव सुनिश्चित करने में समुदाय की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। समुदाय के अन्य सदस्यों के साथ ग्राम स्वराज समूह, बाल स्वराज समूह, सक्षम समूह और कृषि एवं आदिवासी स्वराज संगठन के सदस्यों और ग्राम स्तर पर युवा समूह यदि शिक्षा को सामूहिक जिम्मेदारी माने, बच्चों के अधिकारों की रक्षा करे और विद्यालय के साथ मिलकर कार्य करे, तो पलायन, बाल श्रम और बाल विवाह जैसी चुनौतियों के बावजूद बच्चों की शिक्षा को निरंतर और सुरक्षित बनाया जा सकता है।

6.1 गाँव में सहयोग का माहौल बने– ग्राम स्वराज समूह, बाल स्वराज समूह, सक्षम समूह के सदस्यों और ग्राम स्तर पर युवा समूह को मिलकर बच्चों की शिक्षा पर ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है। ये सभी समूह संगठित होकर अपने गाँव के सभी बच्चों का विद्यालय में नामांकन सुनिश्चित करें।

सबसे पहले अपने गाँव में ऐसे बच्चों की पहचान करना और सूची तैयार करना जो पढाई छोड़ चुके हैं, और उन्हें वापस स्कूल से जोड़ा जाए क्योंकि समय रहते पहचान होने पर बच्चों को दोबारा स्कूल से जोड़ा जा सकता है। नियमित रूप से बच्चों की विद्यालय में उपस्थिति पर निगरानी करें, पलायन प्रभावित बच्चों की विशेष निगरानी और परिवारों की जानकारी रखे और ड्रॉपआउट बच्चों व उनके परिवार या माता पिता से नियमित और तब तक संवाद स्थापित करें, जब तक वे बच्चे विद्यालय से जुड़ ना जाएँ।

6.2 पलायन के दौरान शिक्षा पर ध्यान – आदिवासी क्षेत्रों में मौसमी पलायन शिक्षा टूटने का बड़ा कारण है। ग्राम स्वराज समूह, बाल स्वराज समूह, सक्षम समूह और कृषि एवं आदिवासी स्वराज संगठन के सदस्यों की भूमिका है कि वे परिवारों को बच्चों को साथ ले जाने के प्रभाव समझायें, पलायन से पहले स्कूल को जानकारी दें ताकि विद्यालय में पहले से पता हो और वो बच्चे को शिक्षा से वंचित होने से रोकने में सहायता करें, बच्चों के पुनः नामांकन में सहयोग करें और गाँव के युवा और पढ़े लिखे सदस्य मिलकर ग्राम स्तर पर सामुदायिक अध्ययन समूह बनायें और बच्चों को सीखने में सहयोग करें, क्योंकि यदि समुदाय सजग रहे, तो पलायन के बावजूद बच्चों की पढ़ाई जारी रह सकती है।

6.3 विद्यालय और समुदाय के बीच मजबूत आपसी संवाद–विद्यालय और समुदाय के बीच विश्वासपूर्ण संबंध बच्चों की शिक्षा के लिए बहुत जरूरी हैं। विद्यालय प्रबंधन समिति (SMC) में सक्रिय भूमिका, शिक्षक – अभिभावक बैठक में भागीदारी, स्कूल विकास योजनाओं में सहयोग, बच्चों की समस्याओं पर शिक्षकों से संवाद करना भी ग्राम स्वराज समूह, बाल स्वराज समूह, सक्षम समूह और कृषि एवं आदिवासी स्वराज संगठन के सदस्यों की भूमिका में आता है ताकि विद्यालय बच्चों की वास्तविक परिस्थितियों को बेहतर तरीके से समझ पाये।

6.4 स्थानीय भाषा व संस्कृति को सम्मान देना–आदिवासी बच्चे अपनी मातृभाषा और सांस्कृतिक पहचान से गहराई से जुड़े होते हैं। अतः समुदाय में गठित ग्राम स्वराज समूह, बाल स्वराज समूह, सक्षम समूह और कृषि एवं आदिवासी स्वराज संगठन के सदस्यों की भूमिका है कि विद्यालय के साथ जुड़कर लोककथाएँ, गीत और स्थानीय ज्ञान स्कूल से जोड़ने, बच्चों का मातृभाषा आधारित सीखने में सहयोग करे और सांस्कृतिक गतिविधियों में बच्चों की भागीदारी बढ़ाने की संभावना को बढ़ाये ऐसा करने से बच्चे विद्यालय को अपने जीवन से जुड़ा हुआ महसूस करते हैं।

6.5 सामुदायिक स्तर पर सीखने के केंद्र और सहयोग– जहाँ विद्यालय दूर हों या संसाधन कम हों, वहाँ समुदाय और ग्राम स्वराज समूह, बाल स्वराज समूह, सक्षम समूह और कृषि एवं आदिवासी स्वराज संगठन के सदस्य सीखने के वैकल्पिक अवसर विकसित कर सकता है। उदाहरण के लिए बच्चों के लिए शाम की अध्ययन कक्षाएँ शुरू करें जहाँ पर बच्चों को 1–2 घंटे सीखने और समझने में आ रही समस्याओं पर उनके साथ काम करें, बाल स्वराज समूह के साथ गतिविधियों और खेलों का आयोजन कर गाँव से जुडी चीजों पर समझ बनायें, प्रत्येक गाँव में बच्चों के लिए एक पुस्तक कोना बनायें जहाँ बच्चों को पुस्तकों के साथ समय बिताने के लिए प्रेरित करें, इन सभी प्रकार के कार्यों में गाँव स्तर पर युवा स्वयंसेवक आगे आये और सहयोग करें क्योंकि यह विशेष रूप से कमजोर और प्रथम पीढ़ी के शिक्षार्थियों अर्थात ऐसे बच्चे जिनके घर में माता पिता निरक्षर हैं, के लिए उपयोगी है।

6.6 बालिका शिक्षा में समुदाय की भूमिका – आदिवासी क्षेत्रों में बालिकाओं की शिक्षा कई सामाजिक और आर्थिक कारणों से प्रभावित होती है। इसलिए समुदाय और ग्राम स्वराज समूह, बाल स्वराज समूह, सक्षम समूह और कृषि एवं आदिवासी स्वराज संगठन के सदस्य मिलकर बालिकाओं के लिए सुरक्षित वातावरण सुनिश्चित करे, किशोरी बालिकाओं के समूह बनाये और उनके साथ संवाद स्थापित करें, परिवारों को प्रेरित करें कि वे बालिकाओं को कम से कम माध्यमिक स्तर तक की शिक्षा तक अवश्य जोड़े रखें और बालिकाओं के जल्दी विवाह करने से
रोकने में भूमिका निभायें ।

07 सरकार की भूमिका – आदिवासी क्षेत्रों में पलायन और बच्चों की शिक्षा एक–दूसरे से गहराई से जुड़े हुए विषय हैं। दक्षिणी राजस्थान, गुजरात और मध्य प्रदेश के आदिवासी अंचल में बड़ी संख्या में परिवार रोजगार, पानी, खेती की अस्थिरता और आर्थिक संकट के कारण हर वर्ष पलायन करते हैं। ऐसी स्थिति में सरकार की भूमिका केवल शिक्षा उपलब्ध कराने तक सीमित नहीं रहती, बल्कि बच्चों को पलायन की परिस्थितियों में भी शिक्षा से जोड़े रखना, उनकी सुरक्षा सुनिश्चित करना और परिवारों की आजीविका मजबूत करना भी उतना ही आवश्यक हो जाता है।

7.1 कृषि आधारित सुविधाओं को मजबूत बनाने में सहयोग– सिंचाई सुविधाएँ बढ़ाना, जल संरक्षण कार्य करना, बीज, खाद और खेती प्रशिक्षण उपलब्ध करवाना और लघु किसान परिवारों को सहायता दें ताकि किसान पलायन पर जाने के बजाय अपने खेतों में जुटकर मेहनत करें और उस मेहनत का फायदा भी प्राप्त कर सकें। सरकार के इस प्रयास से इन किसान परिवारों के बच्चों के जीवन में भी स्थायित्व आ सकेगा और उनका शिक्षा से नियमित जुड़ाव सुनिश्चित करने में सहयोग मिल सकेगा।

7.2 गाँव में रोजगार उपलब्ध कराना – मनरेगा का प्रभावी क्रियान्वयन और स्थानीय रोजगार योजनाओं को मजबूत किया जाए, साथ ही जल संरक्षण कार्य, सिंचाई सुविधाओं का विकास, कृषि आधारित रोजगार, वन उपज आधारित आजीविका और कौशल विकास कार्यक्रमों के आयोजन से परिवारों को अपने गाँव में ही काम मिलने लगेगा और पलायन से बच सकेंगे और गाँव में ही पर्याप्त रोजगार उपलब्ध होने से परिवारों को बच्चों सहित बाहर जाने की मजबूरी कम होगी। जब परिवारों की आय स्थानीय स्तर पर बढ़ेगी, तब पलायन में कमी आयेगी और बच्चों की शिक्षा भी स्थिर रहने की संभावना बढ़ेगी।

7.3 पलायन प्रभावित बच्चों के लिए मौसमी शिक्षा – केंद्र और आवासीय विद्यालय की व्यवस्था पर ध्यान केन्द्रित किया जाना चाहिए। यदि सभी बच्चों की शिक्षा सुनिश्चित किये जाने के क्रम में मौसमी आवासीय विद्यालय, प्रवासी बच्चों के लिए शिक्षा शिविर, श्रमिक स्थलों पर अस्थायी शिक्षा केंद्र आदि से जुडी व्यवस्थाओं पर कार्य किया जाए तो बच्चों की पढ़ाई नही छूटेगी।

7.4 पोर्टेबल शिक्षा व्यवस्था – कई परिवार बार–बार स्थान बदलते हैं। ऐसी स्थिति में बच्चों की शिक्षा को "स्थान आधारित" नहीं बल्कि **"बच्चा आधारित"** बनाना जरूरी है। इसके लिए बच्चों का यूनिक शैक्षणिक रिकॉर्ड, किसी भी विद्यालय में तुरंत प्रवेश, राज्यों के बीच समन्वय और छात्रवृत्ति सुविधा और दस्तावेज व्यवस्था इस प्रकार से बने हों जिनको सभी जगहों पर आसानी और सुविधा पूर्वक तरीकों से काम में लिया जा सके।

7.5 पुनः नामांकन अभियान – पलायन से लौटे बच्चों को दोबारा विद्यालय से जोड़ने के लिए घर–घर संपर्क की व्यवस्था की जाए, विशेष नामांकन अभियान चलाये जाएँ, ब्रिज कोर्स और रिकवरी कार्यक्रम जैसी व्यवस्थाओं को प्राथमिक स्तर पर तय किया जाए ताकि बच्चों को सीखने और शिक्षा से जुड़ने में सहयोग प्राप्त हो सके।

7.6 समुदाय आधारित शिक्षा तंत्र मजबूत करना – सरकार को शिक्षा को समुदाय से जोड़ना होगा इसके लिए विद्यालय प्रबंधन समिति ;डब्द्ध को सक्रिय करना, ग्राम पंचायतों की भागीदारी बढ़ाना, महिला समूह और युवा समूहों को जोड़ना, बाल स्वराज समूहों को प्रोत्साहित करने से समुदाय की सहभागिता बच्चों की निरंतर शिक्षा सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

08 प्रेरक संदेश – "जब समुदाय जागरूक होता है, विद्यालय संवेदनशील होता है और सरकार जिम्मेदारी निभाती है, तब हर बच्चा शिक्षा से जुड़ता है और समाज प्रगति की ओर बढ़ता है।"

09 आइये मिलकर सामूहिक संकल्प लें– "जंगल की खुशबू, पहाड़ों की शान, माटी की महक और संस्कृति हमारी पहचान। "मांदल की गूंज और गीतों की तान, शिक्षा से रोशन हो हर आदिवासी नन्हा इंसान।"

सही खाना, स्वस्थ बचपन और खुशहाल परिवार

अच्छा खाना वही जो बच्चे को ताकत दे हमारे गाँवों में अक्सर यह सुनने को मिलता है कि बच्चा दिनभर कुछ न कुछ खाता रहता है, फिर भी उसका शरीर कमजोर रहता है। बच्चे जल्दी बीमार पड़ जाते हैं, पढ़ाई में मन नहीं लगता और खेलते समय जल्दी थक जाते हैं। कई बार माँ भी दिनभर काम करती है, लेकिन शरीर में कमजोरी बनी रहती है। समस्या केवल भूख की नहीं, बल्कि सही पोषण की है। पेट तो भर जाता है, लेकिन शरीर को वह भोजन नहीं मिलता जिससे खून बने, हड्डियाँ मजबूत हों और शरीर बीमारियों से लड़ सके। पहले घरों में दाल, चना, बाजरे की रोटी, सहजन की सब्जी और घर का बना खाना खाया जाता था। अब उसकी जगह चिप्स, बिस्किट, कोल्ड ड्रिंक और पैकेट वाले खाने ने ले ली है। ये चीजें स्वाद तो देती हैं, लेकिन शरीर को ताकत नहीं देतीं।

बच्चों का खाना जो सच में ताकत दे– बच्चों को ऐसा भोजन चाहिए जिसमें ताकत और पोषण दोनों हों। बाजरा, मक्का, ज्वार और चावल शरीर को ऊर्जा देते हैं। दाल, चना, मूंगफली और अंडा शरीर और मांसपेशियों को मजबूत बनाते हैं। खून बढ़ाने के लिए गुड़, चुकंदर और हरी सब्जियाँ जरूरी हैं। हड्डियों को मजबूत रखने के लिए तिल, दूध और सहजन की पत्ती फायदेमंद हैं। बीमारी से बचाने के लिए आँवला, नींबू और मौसमी फल बहुत उपयोगी हैं।

बच्चों के लिए जरूरी आदतें – सुबह खाली पेट स्कूल न भेजें खेलने के बाद चना, गुड़ या फल दें बच्चों को थोड़ा–थोड़ा कई बार खिलाएँ मोबाइल या टीवी देखते हुए खाना न दें पैकेट वाले खाने की आदत कम करें वो खाना जिसे हमने पीछे छोड़ दिया हमारे खेतों और आँगन में ही पोषण छिपा हुआ है। जो खाना पहले हर घर में बनता था, वही आज सबसे ज्यादा जरूरी है। बाजरा शरीर को ऊर्जा देता है, पेट लंबे समय तक भरा रखता है और हड्डियों को मजबूत करता है। चना सस्ता होने के बावजूद ताकत से भरपूर होता है। गुड़ केवल मिठास नहीं देता, बल्कि खून भी बढ़ाता है। सहजन की पत्ती गाँव में आसानी से मिल जाती है और इसमें आयरन, कैल्शियम और विटामिन भरपूर होते हैं। तिल छोटे दाने जरूर हैं, लेकिन शरीर को बहुत ताकत देते हैं। आँवला शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाता है और बीमारी से बचाता है।

महिलाओं का स्वास्थ्य पूरे परिवार की ताकत – घर की महिला स्वस्थ होगी तभी पूरा परिवार स्वस्थ रहेगा। लेकिन अक्सर महिलाएँ सबसे आखिर में खाना खाती हैं और सबसे ज्यादा काम करती हैं। इसी कारण कई महिलाओं में खून की कमी, कमजोरी और थकान बनी रहती है। महिलाओं को रोज हरी सब्जियाँ, दाल, चना, तिल, गुड़, दूध और मौसमी फल खाने चाहिए। गर्भवती महिलाओं को विशेष देखभाल की जरूरत होती है क्योंकि उनका स्वास्थ्य सीधे बच्चे से जुड़ा होता है।

गर्भवती महिलाओं के लिए जरूरी बातें–

- आयरन और कैल्शियम की गोली समय पर लें।
- कम से कम 4 बार स्वास्थ्य जाँच करवाएँ।
- बहुत भारी काम न करें।
- पर्याप्त आराम और पौष्टिक भोजन लें।
- मौसम बदले तो आदतें भी बदलें।

मौसम के साथ शरीर की जरूरतें भी बदलती हैं। थोड़ी सावधानी कई बीमारियों से बचा सकती है। गर्मी के मौसम में ज्यादा पानी पीना चाहिए और हल्का भोजन लेना चाहिए। छाछ, नींबू पानी, बेल और तरबूज शरीर को ठंडक देते हैं।

बरसात में उबला पानी पीना और भोजन ढककर रखना जरूरी है। आसपास पानी जमा नहीं होने देना चाहिए ताकि मलेरिया और डेंगू जैसी बीमारियों से बचा जा सके। तुलसी, नीम, हल्दी और अदरक इस मौसम में फायदेमंद होते हैं। सर्दियों में बच्चों को गर्म कपड़े पहनाने चाहिए और पौष्टिक भोजन देना चाहिए। बाजरा, तिल, गुड़, अदरक और हल्दी शरीर को गर्म रखते हैं और ताकत बढ़ाते हैं।

याद रखें –

- बच्चों को धूप और ताजी हवा जरूर मिले।
- गंदा और बासी खाना बीमारी बढ़ाता है।
- मौसम के अनुसार भोजन बदलना जरूरी है।

दादी–नानी के घरेलू नुस्खे– हमारे घरों में कई ऐसे घरेलू उपाय हैं जो छोटी बीमारियों में राहत देते हैं। खाँसी–जुकाम में तुलसी, अदरक और शहद फायदेमंद होते हैं। पेट दर्द में अजवाइन और काला नमक उपयोगी हैं। कमजोरी होने पर भीगा चना और गुड़ ताकत देते हैं। छोटे घाव पर हल्दी का लेप लगाने से राहत मिलती है।

साफ–सफाई सबसे आसान सुरक्षा – बीमारी कई बार खाने से नहीं, बल्कि गंदगी से फैलती है। साबुन से हाथ धोना सबसे सस्ती और असरदार आदत है। साफ पानी, साफ बर्तन और साफ हाथ अच्छे स्वास्थ्य की शुरुआत हैं।

बदलाव घर से नहीं, पूरे गाँव से आता है – जब गाँव का हर परिवार बच्चों और महिलाओं के स्वास्थ्य की जिम्मेदारी समझने लगता है, तभी असली बदलाव दिखाई देता है।

पोषण केवल रसोई की बात नहीं, पूरे समुदाय की जिम्मेदारी है। आँगनवाड़ी में बच्चों का नियमित वजन करवाना जरूरी है। ग्रोथ कार्ड केवल एक कागज नहीं, बल्कि बच्चे की बढ़त और स्वास्थ्य की कहानी है। यदि बच्चे का वजन लगातार नहीं बढ़ रहा, तो यह संकेत है कि उसके भोजन और देखभाल पर ध्यान देने की जरूरत है। महिला समूहों और गाँव की बैठकों में केवल योजनाओं की नहीं, बल्कि भोजन और पोषण की बात भी होनी चाहिए। गाँव की महिलाएँ मिलकर सीख सकती हैं कि सहजन की पत्ती को बच्चों के खाने में कैसे मिलाएँ, बाजरे और कोदो से पौष्टिक खिचड़ी कैसे बनाएँ और गुड़–चना से सस्ता लेकिन ताकत देने वाला नाश्ता कैसे तैयार करें।

मूल्य श्रृंखला एवं वैल्यू एडिशन का महत्व : आदिवासी क्षेत्रों में आय बढ़ाने का प्रभावी माध्यम

ग्रामीण एवं आदिवासी क्षेत्रों में किसान और वनोपज संग्राहक अक्सर अपने उत्पादों को कच्चे रूप में बेच देते हैं, जिससे उन्हें कम मूल्य प्राप्त होता है। जबकि यदि उन्हीं उत्पादों में थोड़ा प्रसंस्करण (प्रोसेसिंग), सफाई, पैकिंग या अन्य प्रकार का वैल्यू एडिशन (मूल्य संवर्धन) किया जाए तो उनकी बाजार कीमत कई गुना बढ़ सकती है। यही प्रक्रिया मूल्य श्रृंखला **(Value Chain)** को मजबूत बनाती है और समुदाय की आय में वृद्धि करती है।

मूल्य श्रृंखला क्या है?

मूल्य श्रृंखला का अर्थ है किसी उत्पाद के उत्पादन से लेकर उपभोक्ता (उपयोग करने वाला) तक पहुंचने की पूरी प्रक्रिया। इस प्रक्रिया में यदि प्रत्येक चरण पर उत्पाद का मूल्य बढ़ाया जाए तो किसान एवं उत्पादक को अधिक लाभ प्राप्त होता है।

उदाहरण के लिए किसान यदि केवल कच्चा माल बेचता है तो उसे सीमित लाभ मिलता है, लेकिन यदि वह उसी उत्पाद की सफाई, ग्रेडिंग, प्रसंस्करण और पैकेजिंग कर बाजार में बेचता है तो उसकी आय बढ़ जाती है।

नीम की निंबोली का वैल्यू एडिशन – आदिवासी क्षेत्रों में बड़ी मात्रा में नीम की निंबोली उपलब्ध होती है, लेकिन अधिकांश स्थानों पर इस महत्वपूर्ण वन उपज पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया जाता, जिसके कारण नीम के बीज अक्सर बेकार चले जाते हैं।

कुछ किसान निंबोली का संग्रहण करते भी हैं, तो उसे बिना उचित सफाई और प्रसंस्करण के कच्चे रूप में बेच देते हैं। परिणामस्वरूप उन्हें कम कीमत प्राप्त होती है, जबकि बड़े व्यापारी इसी उत्पाद से अधिक लाभ अर्जित करते हैं।

यदि समुदाय, किसान समूह या संगठन मिलकर निंबोली का व्यवस्थित संग्रहण करें, उसे अच्छी तरह साफ कर सुखाएं और गुणवत्ता के अनुसार छंटाई करें, तो बाजार में उसका बेहतर मूल्य प्राप्त किया जा सकता है।

इसके अतिरिक्त निंबोली से कई उपयोगी उत्पाद तैयार किए जा सकते हैं, जैसे– नीम तेल, जैविक कीटनाशक, नीम खली

इन उत्पादों का उपयोग सबसे पहले अपने खेतों और घरों में जैविक खेती एवं पौध संरक्षण के लिए किया जा सकता है। इसके बाद यदि उत्पादन अधिक मात्रा में हो, तो उसे बाजार में बेचकर अतिरिक्त आय अर्जित की जा सकती है। इस प्रकार निंबोली का वैल्यू एडिशन किसानों और समुदाय की आय को कई गुना बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

पलाश के फूलों का वैल्यू एडिशन – पलाश के फूल आदिवासी क्षेत्रों की एक महत्वपूर्ण वन उपज हैं। हालांकि अधिकांश लोग इसके विभिन्न उपयोगों और औषधीय गुणों से परिचित नहीं हैं, इसलिए अब तक इस पर अपेक्षित ध्यान नहीं दिया गया है। यदि पलाश के फूलों का सही तरीके से उपयोग और वैल्यू एडिशन किया जाए, तो यह समुदाय के लिए आय का एक महत्वपूर्ण स्रोत बन सकता है।

पलाश के फूलों से कई प्रकार के उपयोगी उत्पाद तैयार किए जा सकते हैं, जैसे–

प्राकृतिक एवं पर्यावरण अनुकूल रंग तैयार किया जा सकता है।

■हर्बल एवं आयुर्वेदिक उत्पादों में इसका उपयोग किया जा सकता है।

■पलाश के फूलों से पौष्टिक एवं स्वास्थ्यवर्धक हर्बल चाय तैयार की जा सकती है।

■पारंपरिक ज्ञान के अनुसार गर्मियों में होने वाली घमौरियों एवं त्वचा संबंधी समस्याओं में इसके फूलों को गर्म पानी में डालकर स्नान करने से लाभ मिलता है।

यदि समुदाय द्वारा पलाश के फूलों का संग्रहण कर उन्हें साफ–सुथरे तरीके से सुखाया जाए और उचित पैकेजिंग के साथ बाजार में उपलब्ध कराया जाए, तो उनका मूल्य कई गुना बढ़ सकता है। इससे न केवल स्थानीय लोगों की आय में वृद्धि होगी, बल्कि पलाश जैसे महत्वपूर्ण वन संसाधनों के संरक्षण एवं उपयोग को भी बढ़ावा मिलेगा। वैल्यू एडिशन के माध्यम से पलाश के फूल स्थानीय रोजगार एवं आजीविका संवर्धन का एक प्रभावी माध्यम बन सकते हैं।

दालों का वैल्यू एडिशन– क्षेत्र में खास करके उड़द, मूंग, चना, तुअर आदि दालों का उत्पादन होता है। अधिकांश किसान अपनी उपज को कच्चे रूप में बेच देते हैं, जिससे उन्हें सीमित लाभ प्राप्त होता है। यदि किसान कच्ची फसल बेचने के बजाय अपने घर पर पारंपरिक तरीके (घंटूले) से दाल तैयार कर बेचें, तो वे अधिक मुनाफा प्राप्त कर सकते हैं।

इस पहल की शुरुआत संगठन, गांव या ब्लॉक स्तर से की जा सकती है, जिससे स्थानीय समुदाय को शुद्ध एवं गुणवत्तापूर्ण दाल उपलब्ध होगी और किसानों को बेहतर आय प्राप्त होगी। इससे समुदाय के भीतर ही मूल्य संवर्धन (वैल्यू एडिशन) का लाभ पहुंच सकेगा।

इसके अलावा यदि दालों की अच्छी तरह सफाई, ग्रेडिंग और आकर्षक पैकेजिंग करके बिक्री की जाए, तो बाजार में उनका मूल्य और अधिक बढ़ सकता है। स्थानीय स्तर पर उत्पादित दालों को पैक करके बेचने से ग्रामीण उत्पादों को नई पहचान मिलेगी तथा किसानों, महिला समूहों और युवा उद्यमियों के लिए अतिरिक्त आय के अवसर भी सृजित होंगे। इस प्रकार दालों का वैल्यू एडिशन किसानों की आय बढ़ाने, स्थानीय रोजगार सृजन करने और ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाने का एक प्रभावी माध्यम बन सकता है।

सब्जियों का सुखमणी – कई बार मौसम के दौरान सब्जियों का उत्पादन बहुत अधिक हो जाता है, जिसके कारण बाजार में उनकी कीमतें काफी कम हो जाती हैं। ऐसी स्थिति में किसानों को अपनी उपज का उचित मूल्य नहीं मिल पाता और आर्थिक नुकसान उठाना पड़ता है।

इस समस्या का एक प्रभावी समाधान वैल्यू एडिशन है। सब्जियों को सुखमणी के माध्यम से लंबे समय तक सुरक्षित रखा जा सकता है, जिससे उन्हें बाद में बेहतर कीमत पर बेचा जा सके।

उदाहरण के लिए भिंडी, कद्दू, सेम की फली, बैंगन आदि सब्जियों का सुखमणीकरण किया जा सकता है। इसके साथ ही जंगल एवं खेतों में प्राकृतिक रूप से उगने वाली स्थानीय सब्जियों जैसे बथुआ, रजन, ढीमड़ी, काचरी आदि को भी सुखाकर संरक्षित किया जा सकता है। सुखमणी की गई सब्जियां लंबे समय तक खराब नहीं होतीं, उनका पोषण मूल्य काफी हद तक सुरक्षित रहता है और वर्ष भर उपयोग में लाई जा सकती हैं। उचित पैकेजिंग एवं विपणन के माध्यम से इन उत्पादों को बाजार में बेहतर मूल्य पर बेचा जा सकता है। इस प्रकार सब्जियों का सुखमणीकरण न केवल किसानों को उचित मूल्य दिलाने में सहायक है, बल्कि स्थानीय खाद्य परंपराओं के संरक्षण, खाद्य सुरक्षा और ग्रामीण आय वृद्धि का भी एक प्रभावी माध्यम है।

महुआ का वैल्यू एडिशन – महुआ आदिवासी जीवन, संस्कृति और आजीविका का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। यह केवल एक वन उपज नहीं, बल्कि आदिवासी समुदाय की परंपराओं और आर्थिक गतिविधियों से भी जुड़ा हुआ है। यदि महुआ का वैल्यू एडिशन किया जाए, तो इससे समुदाय को बेहतर आय प्राप्त हो सकती है।

महुआ से कई प्रकार के उपयोगी उत्पाद तैयार किए जा सकते हैं, जैसे –

■ पारंपरिक तरीके से महुआ के बीजों से तेल निकालकर घरेलू उपयोग व अन्य आवश्यक कार्यों में प्रयोग किया जा सकता है।

■ महुआ के फूल के ढोकले बहुत पौष्टिक बनते है

■ महुआ के फूल पौष्टिक लड्डू तैयार किए जा सकते हैं।

■ महुआ से विभिन्न खाद्य एवं स्वास्थ्यवर्धक उत्पाद भी बनाए जा सकते हैं।

महुआ को केवल कच्चे रूप में बेचने के बजाय यदि उसका प्रसंस्करण कर मूल्य संवर्धित उत्पाद तैयार किए जाएं, तो उसका बाजार मूल्य कई गुना बढ़ सकता है। इससे स्थानीय समुदाय, विशेषकर महिला समूहों और ग्रामीण परिवारों के लिए अतिरिक्त आय एवं रोजगार के अवसर भी सृजित हो सकते हैं।

आम का वैल्यू एडिशन – आदिवासी क्षेत्रों में बड़ी मात्रा में आम का उत्पादन होता है। आम के मौसम में जब बाजार में इसकी अधिक आवक होती है, तब किसानों को अपनी उपज का उचित मूल्य नहीं मिल पाता। ऐसी स्थिति में आम का वैल्यू एडिशन किसानों की आय बढ़ाने का एक प्रभावी माध्यम बन सकता है।

आम से कई प्रकार के मूल्य संवर्धित उत्पाद तैयार किए जा सकते हैं, जिनकी बाजार में अच्छी मांग रहती है।

1. आमचूर (सूखा आम) – कच्चे आम से आमचूर तैयार किया जा सकता है। आमचूर बनाते समय गुणवत्ता और स्वच्छता का विशेष ध्यान रखना आवश्यक है। आम के टुकड़े साफ–सुथरे होने चाहिए, उनमें किसी प्रकार की गंदगी नहीं होनी चाहिए तथा उन्हें अच्छी तरह सुखाया जाना चाहिए। जितनी अधिक सफाई और गुणवत्ता के साथ आमचूर तैयार किया जाएगा, बाजार में उसकी कीमत और मांग उतनी ही अधिक होगी।

2. आमचूर पाउडर – सुखाए गए आमचूर को पीसकर आमचूर पाउडर भी तैयार किया जा सकता है। इसकी पैकिंग कर मसाले के रूप में बाजार में बेचा जा सकता है। आमचूर पाउडर की मांग पूरे वर्ष बनी रहती है, जिससे किसानों को अतिरिक्त आय प्राप्त हो सकती है।

3. अन्य मूल्य संवर्धित उत्पाद – जिन लोगों के पास आवश्यक कौशल और संसाधन उपलब्ध हैं, वे **आम से अन्य उत्पाद भी तैयार कर सकते हैं, जैसे – आम का अचार, आम पापड़, आम का जैम** इन उत्पादों का उचित प्रसंस्करण, पैकेजिंग और विपणन करके बाजार में बेहतर मूल्य प्राप्त किया जा सकता है। इस प्रकार आम का वैल्यू एडिशन किसानों,

महिला समूहों और ग्रामीण उद्यमियों के लिए आय बढ़ाने तथा स्थानीय रोजगार सृजन का एक अच्छा अवसर प्रदान करता है।

मिर्च का वैल्यू एडिशन – अधिकांश आदिवासी क्षेत्रों में किसान हरी एवं लाल मिर्च का उत्पादन करते हैं, लेकिन कई बार उन्हें अपनी उपज कच्चे रूप में ही बेचनी पड़ती है, जिससे उचित मूल्य प्राप्त नहीं हो पाता। यदि मिर्च को अच्छी तरह सुखाकर, साफ करके और पीसकर बेचा जाए, तो उसका मूल्य काफी बढ़ सकता है।

मिर्च से निम्न प्रकार के मूल्य संवर्धित उत्पाद तैयार किए जा सकते हैं– सूखी मिर्च, मिर्च पाउडर यदि महिला समूह, किसान उत्पादक स्थानीय संगठन अपने ब्रांड नाम से मिर्च पाउडर तैयार कर बाजार में बेचें, तो उन्हें अतिरिक्त आय प्राप्त हो सकती है। मिर्च की गुणवत्ता, रंग, तीखापन एवं स्वच्छता का ध्यान रखते हुए पैकिंग की जाए तो स्थानीय उत्पादों की अच्छी पहचान बनाई जा सकती है।

हल्दी का वैल्यू एडिशन – हल्दी आदिवासी क्षेत्रों की एक महत्वपूर्ण कृषि फसल है। अधिकांश किसान हल्दी को कच्चे रूप में या साधारण प्रसंस्करण के बाद बेच देते हैं, जबकि मूल्य संवर्धन के माध्यम से इसकी बाजार कीमत कई गुना बढ़ाई जा सकती है।

आज बाजार में मिलने वाले कई हल्दी पाउडरों की शुद्धता को लेकर उपभोक्ताओं के मन में संदेह रहता है कि उनमें वास्तविक हल्दी है या केवल रंग मिलाया गया है। ऐसे में ग्रामीण क्षेत्रों में उत्पादित शुद्ध एवं प्राकृतिक हल्दी की बाजार में विशेष मांग हो सकती है।

हल्दी से निम्न उत्पाद तैयार किए जा सकते हैं –

शुद्ध हल्दी पाउडर – यदि किसान हल्दी को सही तरीके से उबालकर, सुखाकर, पीसकर और स्वच्छ पैकिंग में बाजार तक पहुंचाएं, तो उन्हें बेहतर मूल्य प्राप्त हो सकता है। साथ ही उपभोक्ताओं को भी शुद्ध एवं गुणवत्तापूर्ण उत्पाद उपलब्ध हो सकता है।

निष्कर्ष–मूल्य संवर्धन केवल उत्पाद की कीमत बढ़ाने का माध्यम नहीं है, बल्कि यह ग्रामीण एवं आदिवासी समुदायों की आय बढ़ाने, स्थानीय रोजगार सृजन करने तथा स्थानीय संसाधनों के बेहतर उपयोग का प्रभावी तरीका है। नीम की निंबोली, पलाश के फूल, महुआ, इमली, दालें, सब्जियां , मिर्च ,हल्दी तथा अन्य कृषि एवं वन उत्पादों में वैल्यू एडिशन की अपार संभावनाएं हैं। यदि समुदाय संगठित होकर संग्रहण, प्रसंस्करण, पैकेजिंग एवं विपणन की दिशा में कार्य करे तो स्थानीय अर्थव्यवस्था को मजबूत किया जा सकता है तथा किसानों एवं वनोपज संग्राहकों को उनके उत्पादों का उचित मूल्य प्राप्त हो सकता है।

बायोगैस स्वच्छ और सस्ती रसोई का सरल उपाय

आदिवासी क्षेत्रों में आज भी अधिकतर परिवार खाना पकाने के लिए लकड़ी पर निर्भर हैं। यह व्यवस्था वर्षों से चली आ रही है, लेकिन आज इसके दुष्परिणाम साफ दिखाई दे रहे हैं। महिलाओं को रोज जंगल जाना पड़ता है, धुएँ से भरी रसोई में खाना बनाना पड़ता है और धीरे–धीरे इसका असर पूरे परिवार के स्वास्थ्य पर पड़ता है।

इसके साथ–साथ जंगलों पर दबाव बढ़ रहा है। जलवायु परिवर्तन के कारण कई इलाकों में सूखा, कम वर्षा और वन क्षेत्र में कमी देखने को मिल रही है। ऐसे में स्वच्छ और स्थानीय स्तर पर उपलब्ध ऊर्जा स्रोत अपनाना समय की आवश्यकता बन गया है। बायोगैस ऐसी ही एक तकनीक है, जो गोबर और जैविक कचरे से गैस बनाकर घरों तक स्वच्छ ईंधन पहुँचाती है।

लकड़ी पर निर्भरता से जुड़ी समस्याएँ

■धुएँ से खाँसी, आँखों में जलन और साँस की परेशानी

■महिलाओं और बच्चों के स्वास्थ्य पर बुरा असर

■लकड़ी इकट्ठा करने में रोज कई घंटे खर्च

■जंगलों की कटाई और पर्यावरण को नुकसान

कई गाँवों में महिलाएँ बताती हैं कि पहले जहाँ पास के जंगल से लकड़ी मिल जाती थी, अब उन्हें दूर जाना पड़ता है। यह स्थिति भविष्य के लिए चिंता का विषय है।

बायोगैस क्या है और कैसे काम करता है?

बायोगैस प्लांट एक ऐसी संरचना होती है जिसमें :

■गोबर और रसोई का जैविक कचरा

■पानी के साथ मिलाकर

■एक बंद टंकी में डाला जाता है।

कुछ दिनों में इससे गैस बनती है, जो पाइप से सीधे चूल्हे तक जाती है। जो पदार्थ बचता है उसे स्लरी कहते हैं, जो खेतों के लिए बहुत अच्छी जैविक खाद है।

बिन्दु	लकड़ी आधारित चूल्हा	बायोगैस चूल्हा
ईंधन	जंगल की लकड़ी	गोबर, जैविक कचरा
धुआँ	बहुत अधिक	लगभग नहीं
स्वास्थ्य असर	नकारात्मक	बेहतर
महिलाओं का श्रम	अधिक	कम
अतिरिक्त लाभ	कोई नहीं	जैविक खाद

लकड़ी आधारित चूल्हा और बायोगैस चूल्हा : एक तुलना–

बायोगैस अपनाने से परिवार को क्या लाभ?

■रसोई में धुआँ नहीं रहता।

■खाना जल्दी पकता है।

■महिलाओं का समय बचता है।

■बच्चों और बुजुर्गों का स्वास्थ्य बेहतर रहता है।

■लकड़ी और एलपीजी पर खर्च घटता है।

कई परिवार बताते हैं कि बायोगैस अपनाने के बाद उनकी दिनचर्या आसान हो गई है।

खेती के लिए स्लरी का उपयोग

बायोगैस प्लांट से निकलने वाली स्लरी :

■मिट्टी की उर्वरता बढ़ाती है।

■रासायनिक खाद की जरूरत घटाती है।

■फसल की पैदावार बढ़ाने में मदद करती है।

■मिट्टी में नमी बनाए रखने में सहायक होती है।

■इससे खेती अधिक टिकाऊ बनती है।

किस परिवार के लिए कौन सा प्लांट उपयुक्त?

पशुओं की संख्या उपयुक्त प्लांट क्षमता उपयोग 1–2 पशु 1 घन मीटर आंशिक खाना पकाना 2–3 पशु 2 घन मीटर पूरा घरेलू खाना 4–6 पशु 3–4 घन मीटर घरेलू.अतिरिक्त उपयोग सामुदायिक स्तर पर बायोगैस के अवसर

■आंगनवाड़ी केंद्र

■छात्रावास

■सामुदायिक रसोई

■स्वयं सहायता समूहों द्वारा संचालित रसोई

बड़े प्लांट से कई परिवारों को एक साथ लाभ मिल सकता है।

स्थानीय रोजगार और कौशल विकास

■युवाओं को बायोगैस प्लांट निर्माण का प्रशिक्षण

■मरम्मत एवं रखरखाव का काम

■सामग्री आपूर्ति से आय

इससे गाँव के भीतर रोजगार के अवसर बनते हैं।

आगे की राह – यदि पंचायत, स्वयं सहायता समूह और ग्राम संगठन मिलकर बायोगैस को बढ़ावा दें, तो अधिक परिवार स्वच्छ रसोई अपना सकते हैं। इसके लिए :

■जागरूकता बैठकें

■प्रशिक्षण कार्यक्रम

■सरकारी योजनाओं से जोड़ना

■स्थानीय तकनीशियन तैयार करना जरूरी है।

निष्कर्ष– बायोगैस आदिवासी क्षेत्रों के लिए केवल ऊर्जा समाधान नहीं, बल्कि स्वास्थ्य सुधार, जंगल संरक्षण और आजीविका सशक्तिकरण का माध्यम है।

अपनी मिट्टी पर मेहनत से बदली किस्मत

राजस्थान के बांसवाड़ा जिले के घाटोल ब्लॉक के छोटे से गाँव अंतकालिया में रहने वाली काली देवी निनामा की जिंदगी कभी आर्थिक संकट और कठिन संघर्षों से भरी हुई थी। उनके परिवार के पास 5 बीघा जमीन थी, लेकिन खेती से इतनी आमदनी नहीं हो पाती थी कि घर का खर्च ठीक से चल सके। कई बार स्थिति इतनी खराब हो जाती थी कि बच्चों की पढ़ाई तक छुड़वाने की नौबत आ जाती थी। मजबूरी में उन्हें अपने पति शंकरलाल निनामा के साथ मजदूरी के लिए गाँव छोड़कर बाहर जाना पड़ता था। मेहनत बहुत होती थी, लेकिन आय स्थायी नहीं थी। इन कठिन परिस्थितियों के बावजूद काली देवी ने कभी हार नहीं मानी और उनके मन में हमेशा यह विश्वास बना रहा कि मेहनत और सही दिशा एक दिन जरूर जीवन बदल सकती है।

वर्ष 2022 में उनके जीवन में परिवर्तन की शुरुआत हुई, जब गाँव में चल रही सक्षम समूह की बैठक में उनकी मुलाकात कैलाश देवी से हुई। इस बैठक में उन्होंने ध्यानपूर्वक बातों को सुना और उन्हें यह समझ में आया कि यदि पारंपरिक खेती को सही तकनीक और उपलब्ध संसाधनों के साथ अपनाया जाए, तो आर्थिक स्थिति में बड़ा सुधार संभव है। इसी प्रेरणा से वे नियमित रूप से समूह की बैठकों से जुड़ने लगीं और सक्षम समूह के सदस्य के रूप में समूह का हिस्सा बनीं। यहाँ उन्हें उन्नत उकेड़ा खाद, दसपर्णी, जीवामृत, कण्डा पानी, मिश्रित खेती, पोषण वाटिका, बीज उपचार और पशुपालन जैसी प्राकृतिक और पारंपरिक तकनीकों का प्रशिक्षण मिला। इन जानकारियों ने उनकी खेती की सोच को पूरी तरह बदल दिया। उन्होंने इन सभी तकनीकों को पूरे आत्मविश्वास और मेहनत के साथ अपने खेत में अपनाया, जिसके परिणाम स्वरूप धीरे–धीरे मिट्टी की गुणवत्ता सुधरने लगी, फसलें बेहतर होने लगीं और उत्पादन में वृद्धि होने लगी।

वर्ष 2023 के आसपास वाग्धारा संस्था के स्वराज समागम ने उनके जीवन में नई दिशा दी। यहाँ उन्होंने अन्य किसानों के अनुभव सुने और यह समझा कि खेती को केवल पारंपरिक अनाज तक सीमित रखने के बजाय सब्जी उत्पादन से नियमित और अधिक आय प्राप्त की जा सकती है। इसी विचार से प्रेरित होकर उन्होंने अपने छोटे से खेत में भिंडी, ग्वार फली, टेंसी और मिर्ची जैसी सब्जियों की खेती शुरू की। शुरुआत में कई चुनौतियाँ सामने आईं–कभी मौसम की अनिश्चितता, तो कभी बाजार में सही दाम न मिलना – लेकिन काली देवी ने अपनी मेहनत, धैर्य और दृढ़ निश्चय से हार नहीं मानी। वे लगातार खेत में काम करती रहीं और सीखी हुई तकनीकों को व्यवहार में लाती रहीं। उनकी इसी लगन का परिणाम यह हुआ कि आज उनके खेत से रोज ताजी सब्जियाँ बाजार तक पहुँचती हैं और वे प्रतिदिन लगभग रूपये 3500 से रूपये 4000 तक की आय अर्जित कर रही हैं। वर्ष 2024 में उन्होंने खेती से मिले लाभ को आगे बढ़ाते हुए पशुपालन को भी अपनी आय का मजबूत आधार बनाया। उन्होंने अपनी कमाई से भैंसें और गायें खरीदीं। वर्तमान में उनके पास 3 भैंसें, 2 गायें और 5 बकरियाँ हैं। पशुपालन से उन्हें न केवल अतिरिक्त आय प्राप्त होने लगी, बल्कि खेतों के लिए देशी खाद की नियमित आपूर्ति भी सुनिश्चित हो गई, जिससे उनकी पारंपरिक खेती और अधिक मजबूत हुई। साथ ही घर में दूध और दुग्ध उत्पादों की उपलब्धता बढ़ने से परिवार के पोषण स्तर में भी सुधार आया। दूध बेचकर उन्हें प्रतिमाह लगभग रूपये 1500 से रूपये 2500 तक की अतिरिक्त आय भी होने लगी, जिससे उनकी आर्थिक स्थिति और स्थिर हो गई।

वर्ष 2025 में काली देवी ने पहली बार 2 बीघा भूमि में मूंग की खेती की, जिससे उन्हें लगभग रूपये 30,000 का शुद्ध मुनाफा हुआ। यह उनके लिए केवल आर्थिक लाभ नहीं था, बल्कि आत्मविश्वास और नए बदलाव की मजबूत शुरुआत थी। काली देवी ने अपनी मेहनत और दृढ़ संकल्प को ही अपनी सबसे बड़ी ताकत बनाया। जो महिला कभी मजदूरी के लिए गाँव छोड़ने को मजबूर थी, आज वही अपने खेत में आत्मनिर्भरता और सम्मान के साथ जीवन जी रही है। उन्होंने देसी खाद और बीज,दवाई का उपयोग कर खेती की लागत को कम किया और उत्पादन को बढ़ाया। साथ ही खेत की मेड़ों पर आम, अमरूद, कटहल, महुआ और चंदन जैसे बहुउद्देशीय पेड़ लगाकर भविष्य की आय और सुरक्षा का आधार भी तैयार किया।

आज काली देवी निनामा केवल एक सफल किसान नहीं, बल्कि संघर्ष से आत्मनिर्भरता तक की प्रेरणादायक मिसाल हैं। उनकी कहानी यह साबित करती है कि यदि सही मार्गदर्शन, निरंतर मेहनत और आत्मविश्वास हो, तो कठिन से कठिन परिस्थितियों को भी सफलता और सम्मानजनक जीवन में बदला जा सकता है।

पारिस्थितिकी - KEYSTONE वृक्ष

गुन्दा : आदिवासी जीवन, स्वाद और औषधीय गुणों से भरपूर प्रकृति का अनमोल उपहार भारत की पारंपरिक खाद्य संस्कृति और लोक जीवन में अनेक ऐसे वृक्ष और फल शामिल हैं, जो केवल भोजन का स्रोत नहीं बल्कि स्वास्थ्य, संस्कृति और प्रकृति से जुड़े जीवन दर्शन का प्रतीक भी हैं। इन्हीं में से एक है गुन्दा, जिसे विभिन्न क्षेत्रों में लसोड़ा, गोंदा, निसोरा के नाम से जाना जाता है। राजस्थान, गुजरात, मध्यप्रदेश तथा आदिवासी अंचलों में यह वृक्ष विशेष रूप से पाया जाता है।

गर्मी के मौसम में जब अधिकांश पेड़ सूखे और बेजान दिखाई देते हैं, तब गुन्दा अपने हरे फलों के साथ ग्रामीण जीवन में स्वाद, पोषण और ताजगी लेकर आता है। यह फल केवल अचार और सब्जी तक सीमित नहीं है, बल्कि अपने औषधीय गुणों के कारण सदियों से लोक चिकित्सा और आयुर्वेद का हिस्सा रहा है। यही कारण है कि ग्रामीण और आदिवासी समाज में गुन्दा को प्रकृति का अनमोल उपहार माना जाता है।

आदिवासी संस्कृति और जीवन से जुड़ा वृक्ष–

आदिवासी समाज सदियों से प्रकृति के साथ सामंजस्य बनाकर जीवन जीता आया है। जंगल, जल और जमीन उनके जीवन का आधार रहे हैं। गुन्दा का वृक्ष भी इस जीवन पद्धति का अभिन्न हिस्सा है।

गांवों में गर्मियों के दिनों में महिलाएँ और बच्चे जंगलों तथा खेतों की मेड़ों से गुन्दा के फल एकत्रित करते हैं। इन फलों से घर के लिए स्वादिष्ट अचार और सब्जी तैयार की जाती है, वहीं अतिरिक्त उपज स्थानीय हाट–बाजार में बेचकर परिवार की आय भी बढ़ाई जाती है। इस प्रकार यह वृक्ष ग्रामीण अर्थव्यवस्था का छोटा लेकिन महत्वपूर्ण आधार बन जाता है। गुन्दा का पेड़ कम पानी और कठोर जलवायु में भी आसानी से जीवित रहता है। इसकी घनी छाया पशुओं के विश्राम के लिए उपयोगी मानी जाती है। ग्रामीण क्षेत्रों में इसकी लकड़ी ईंधन के रूप में तथा शाखाएँ घरेलू उपयोग की वस्तुएँ बनाने में काम आती हैं। यही वजह है कि आदिवासी समाज इसे केवल पेड़ नहीं, बल्कि जीवन से जुड़ा साथी मानता है।

स्वाद के साथ सेहत का खजाना–

गुन्दा का स्वाद खट्टा–मीठा और हल्का चिपचिपा होता है, जो इसे अन्य फलों से अलग पहचान देता है। लेकिन इसकी सबसे बड़ी विशेषता इसके औषधीय गुण हैं। आयुर्वेद और यूनानी चिकित्सा पद्धति में इसका उपयोग कई स्वास्थ्य समस्याओं के उपचार में किया जाता रहा है। इस फल में प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, फाइबर, कैल्शियम, फास्फोरस, लोहा तथा विटामिन–सी जैसे पोषक तत्व पाए जाते हैं। साथ ही इसमें एंटीऑक्सीडेंट, एंटी–इंफ्लेमेटरी और एंटी–बैक्टीरियल गुण भी मौजूद होते हैं।

1. पाचन तंत्र के लिए लाभकारी – गुन्दा में फाइबर की मात्रा अधिक होती है, जो पाचन क्रिया को बेहतर बनाती है। इसका सेवन कब्ज, गैस और अपच जैसी समस्याओं में राहत देता है। ग्रामीण क्षेत्रों में इसका अचार भूख बढ़ाने वाला माना जाता है।

2. खांसी और सांस संबंधी समस्याओं में राहत – आज बढ़ते प्रदूषण और बदलती जीवनशैली के कारण खांसी और सांस की समस्याएँ आम हो गई हैं। गुन्दा में मौजूद प्राकृतिक तत्व गले की खराश, बलगम और छाती में जमाव को कम करने में सहायक माने जाते हैं। यूनानी चिकित्सा में भी इसका उपयोग खांसी और बुखार के उपचार में किया जाता है।

3. रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने में सहायक – विटामिन–सी और एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर होने के कारण गुन्दा शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता को मजबूत करने में मदद करता है। यह सर्दी–जुकाम जैसी सामान्य बीमारियों से बचाव में सहायक माना जाता है।

4. वजन नियंत्रित करने में उपयोगी – कम कैलोरी और अधिक फाइबर होने के कारण यह लंबे समय तक पेट भरा हुआ महसूस कराता है, जिससे भूख कम लगती है। इसलिए यह वजन नियंत्रित करने वालों के लिए लाभकारी फल माना जाता है।

5. हृदय और मधुमेह रोगियों के लिए लाभकारी – गुन्दा में पाया जाने वाला पोटेशियम रक्तचाप को नियंत्रित रखने में मदद करता है। साथ ही इसका ग्लाइसेमिक इंडेक्स कम होने के कारण यह मधुमेह रोगियों के लिए भी उपयोगी माना जाता है।

6. जोड़ों के दर्द और त्वचा रोगों में उपयोग – लोक चिकित्सा में गुन्दा के फल और पत्तियों का उपयोग जोड़ों के दर्द से राहत पाने के लिए किया जाता है। इसके बीजों का लेप त्वचा की खुजली और सूजन में भी लगाया जाता है।

गुन्दा के पारंपरिक उपयोग –

अचार और सब्जी : गुन्दा का सबसे लोकप्रिय उपयोग अचार बनाने में होता है। मसालों और तेल के साथ तैयार किया गया इसका अचार लंबे समय तक सुरक्षित रहता है और भोजन का स्वाद बढ़ा देता है। कई क्षेत्रों में इसकी सब्जी भी बनाई जाती है।

औषधीय काढ़ा – ग्रामीण समुदाय इसकी छाल और पत्तियों का काढ़ा बनाकर पारंपरिक उपचार में उपयोग करते हैं।

पशु चारा – सूखे के समय इसके पत्ते पशुओं के लिए उपयोगी चारे का काम करते हैं।

पर्यावरण और आजीविका का साथी गुन्दा का वृक्ष जलवायु परिवर्तन के दौर में अत्यंत महत्वपूर्ण माना जा सकता है। यह कम पानी में भी आसानी से बढ़ता है तथा मिट्टी संरक्षण में सहायक होता है। खेतों की मेड़ों और सामुदायिक भूमि पर ऐसे स्थानीय वृक्षों का संरक्षण न केवल पर्यावरण को मजबूत करेगा, बल्कि ग्रामीण परिवारों की पोषण और आजीविका सुरक्षा में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा।

निष्कर्ष – गुन्दा केवल एक जंगली फल नहीं, बल्कि आदिवासी ज्ञान, पारंपरिक भोजन संस्कृति और प्राकृतिक चिकित्सा का जीवंत उदाहरण है। आधुनिक जीवनशैली में जहाँ लोग कृत्रिम खाद्य पदार्थों और दवाओं पर निर्भर होते जा रहे हैं, वहीं गुन्दा जैसे पारंपरिक फल हमें प्रकृति के करीब लौटने का संदेश देते हैं।आज आवश्यकता है कि हम ऐसे स्थानीय और उपयोगी वृक्षों की पहचान करें, उनका संरक्षण करें और नई पीढ़ी तक उनके महत्व को पहुँचाएँ, ताकि आने वाले समय में भी प्रकृति और परंपरा का यह अनमोल रिश्ता जीवित बना।

गाँव की कहानी/सामूहिक प्रयास हलमा

"हलमा" : जल संरक्षण हेतु सामूहिक प्रयास

आदिवासी समुदाय में "हलमा" एक महत्वपूर्ण सामूहिक एवं पारंपरिक व्यवस्था है, जिसके अंतर्गत लोग बिना किसी स्वार्थ या पारिश्रमिक के एक–दूसरे के कार्यों में सहयोग करते हैं। इस परंपरा के माध्यम से खेती, घर निर्माण, जल संरक्षण, सड़क निर्माण, मेड़बंदी तथा अन्य सामुदायिक कार्य संपन्न किए जाते हैं। हलमा न केवल समुदाय में आपसी सहयोग, भाईचारे और एकता की भावना को सुदृढ़ करता है, बल्कि आर्थिक रूप से कमजोर परिवारों को भी सहारा प्रदान करता है और पूरे समाज को आत्मनिर्भर

बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। साथ ही, यह आदिवासी संस्कृति और परंपराओं को जीवित रखने का एक प्रभावी माध्यम है, जिससे सामाजिक समरसता व सांस्कृतिक पहचान बनी रहती है।

इसी पारंपरिक हलमा पद्धति को पुनर्जीवित करने के उद्देश्य से ग्राम स्वराज समूह की पहल पर मध्यप्रदेश के रतलाम जिले के बाजना एवं सैलाना विकासखंड तथा झाबुआ जिले के थांदला एवं पेटलावद विकास खंड के गांवों में वाग्धारा संस्था के सहयोग से समुदाय के साथ निरंतर संवाद आयोजित किए जा रहे हैं। इन संवादों में आदिवासी समुदाय के लिए हलमा के महत्व, वर्षा जल संरक्षण की आवश्यकता तथा सामुदायिक जल स्रोतों की पहचान कर उनमें हलमा आयोजित करने पर चर्चा की जा रही है।

गांवों में आयोजित इन संवादों के सकारात्मक परिणामस्वरूप विभिन्न सामुदायिक जल स्रोतों पर गाद निकासी, साफ–सफाई, मरम्मत तथा अन्य सामूहिक कार्य ग्रामीणों द्वारा अत्यंत उत्साह और समर्पण के साथ किए जा रहे हैं। इन आयोजनों का मुख्य उद्देश्य जल स्रोतों में अधिक समय तक पानी का संचयन सुनिश्चित करना, खेतों में लंबे समय तक सिंचाई की सुविधा उपलब्ध कराना, पशुओं के लिए पेयजल की व्यवस्था बनाए रखना तथा जल संरक्षण को बढ़ावा देना है।

ग्राम स्वराज समूह के मार्गदर्शन और नेतृत्व में क्षेत्र के अनेक गांवों में आसपास के गांवों के समुदायों ने भी एकजुट होकर इन पारंपरिक हलमों में भागीदारी की। हलमा की परंपरा के अनुरूप बिना किसी पारिश्रमिक और बाहरी सहायता के सभी ग्रामीणों ने सामूहिक श्रमदान किया तथा जल स्रोतों के संरक्षण का कार्य सफलतापूर्वक संपन्न किया। हलमा के दौरान समुदाय द्वारा पारंपरिक ढोल–कुंडी की थाप के साथ गांव में रेली निकाली गई, ताकि अधिक से अधिक लोगों की सहभागिता सुनिश्चित हो सके। विभिन्न जल स्रोतों पर हलमा के दौरान ग्रामीणों ने स्वयं भोजन तैयार किया तथा संपूर्ण व्यवस्थाओ का संचालन भी स्वयं किया। इस अवसर पर महिलाओं ने भोजन परोसने के लिए परंपरागत खाखरे (पलाश) के पत्तों से पत्तल तैयार कीं और उन्हीं में सभी प्रतिभागियों को भोजन परोसा। ये सभी पारंपरिक सामुदायिक हलमे समुदाय की एकता, अनुशासन और सामूहिक शक्ति के उत्कृष्ट उदाहरण रहे।

इन सभी हलमों में महिलाओं, पुरुषों, बुजुर्गों और युवाओं ने समान उत्साह एवं जिम्मेदारी के साथ सहभागिता की। इन प्रयासों के परिणामस्वरूप जल स्रोतों में अधिक जल संचय संभव हो सकेगा, जिससे आसपास के खेतों में लंबे समय तक नमी बनी रहेगी।

इसका लाभ रबी एवं जायद दोनों फसलों को मिलेगा। साथ ही, कुओं, बावड़ियों और हैंडपंपों के जलस्तर में सुधार होगा तथा पशुओं के लिए भी लंबे समय तक पेयजल उपलब्ध रह सकेगा। इसके अतिरिक्त, मिट्टी के कटाव में कमी आने से भूमि की उर्वरता बनी रहेगी और कृषि उत्पादकता बढ़ने की संभावना भी मजबूत होगी। क्षेत्र में सामुदायिक सहयोग से आयोजित ये हलमे केवल जल संरक्षण तक सीमित नहीं हैं, बल्कि इनका सामाजिक, सांस्कृतिक और शैक्षणिक महत्व भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। इस सामूहिक प्रयास के माध्यम से वर्तमान पीढ़ी, विशेषकर युवाओं को आदिवासी समुदाय की पारंपरिक हलमा पद्धति के महत्व को समझने और उसे अपनाने का अवसर प्राप्त हो रहा है। युवाओं ने प्रत्यक्ष अनुभव के माध्यम से जाना कि किस प्रकार आपसी सहयोग, सामूहिक निर्णय और श्रमदान के बल पर बड़े से बड़े कार्य कम समय में और प्रभावी ढंग से संपन्न किए जा सकते हैं। इससे उनमें अपनी संस्कृति, परंपराओं और सामुदायिक मूल्यों के प्रति सम्मान एवं गर्व की भावना भी विकसित हो रही है।

ग्राम स्वराज समूह के नेतृत्व में आयोजित ये हलमे जल संरक्षण, सामुदायिक एकता और सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण का एक प्रेरणादायक उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। यह पहल न केवल वर्तमान पीढ़ी के लिए लाभकारी सिद्ध होगी, बल्कि आने वाली पीढ़ियों को भी जल संरक्षण, सामुदायिक सहभागिता और श्रमदान के महत्व का संदेश देगी। ऐसे सफल और सराहनीय प्रयास निश्चित रूप से क्षेत्र के अन्य गांवों के लिए भी प्रेरणा का स्रोत बनेंगे।

सफलता की कहानी - महिला/स्वावलंबन

"प्राकृतिक खेती और आत्मनिर्भरता की ओर दितुड़ी बेन कटारा का प्रेरणादायक सफर" दाहोद जिले के फतेहपुरा तालुका के घाणीखुट गाँव की निवासी दितुड़ी बेन कानजी भाई कटारा आज अपने गाँव में आत्मनिर्भर महिला किसान के रूप में एक प्रेरणा बन चुकी हैं। वर्तमान में वे वाग्धारा संस्था के सक्षम समूह की सक्रिय सदस्य हैं और पिछले पाँच वर्षों से संस्था के साथ निरंतर जुड़ी हुई हैं। दितुड़ी बेन नियमित रूप से सक्षम समूह की बैठकों में भाग लेती हैं और वहाँ से प्राप्त जानकारी एवं मार्गदर्शन को अपने जीवन और खेती में अपनाती रही हैं। उनका परिवार आर्थिक रूप से सीमित संसाधनों वाला था। उनके चार बड़े बेटे अलग रहते हैं तथा उनके हिस्से में केवल 2 एकड़ कृषि भूमि थी। सीमित जमीन और संसाधनों के बावजूद उन्होंने हार नहीं मानी, बल्कि वाग्धारा संस्था के मार्गदर्शन से अपनी खेती को आत्मनिर्भर और जैविक खेती की दिशा में परिवर्तित किया।

पिछले पाँच वर्षों में दितुड़ी बेन ने हल्दी, अदरक तथा विभिन्न प्रकार की सब्जियों की खेती प्रारंभ की। पहले जहाँ खेती केवल घरेलू उपयोग तक सीमित थी, वहीं अब यह उनके परिवार की आय का मजबूत स्रोत बन चुकी है। वर्तमान में उन्हें सब्जियों से प्रतिदिन लगभग रू. 200 से रू. 300 तक की नियमित आय प्राप्त हो रही है। उनके घर में चार भैंसें भी हैं। पशुपालन से प्राप्त गोबर का उपयोग वे खेतों में खाद के रूप में करती हैं, जिससे खेती की लागत कम हुई और मिट्टी की उर्वरता बढ़ी। वे प्रतिदिन लगभग 10 लीटर दूध पास की डेयरी में देती हैं, जिससे प्रत्येक 10 दिनों में लगभग रू. 7000 की आय प्राप्त हो रही है। वाग्धारा संस्था द्वारा दिए गए प्रशिक्षण और मार्गदर्शन के अनुसार दितुड़ी बेन समय–समय पर सुखा जीवामृत और दसपर्णी दवा का उपयोग करती हैं। इससे उनकी खेती पूरी तरह प्राकतिक और रसायन मुक्त बनती जा रही है। अब उनका पूरा परिवार देशी खाद, देशी बीज और प्राकृतिक जंतुनाशक दवाओं का उपयोग कर प्राकृतिक खेती को अपनाने लगा है। यह परिवर्तन केवल खेती तक सीमित नहीं रहा, बल्कि परिवार की सोच और जीवनशैली में भी सकारात्मक बदलाव आया है। अब वे कम लागत में अधिक उत्पादन और सुरक्षित खाद्यान्न की दिशा में आगे बढ़ रहे हैं। दितुड़ी बेन ने खेती में नवाचार और पर्यावरण संरक्षण का भी अनूठा उदाहरण प्रस्तुत किया। गर्मी के मौसम में शादी–ब्याह में उपयोग किए गए पानी के डिस्पोजल ग्लासों को उन्होंने इकट्ठा किया और उनमें गोबर खाद एवं मिट्टी का मिश्रण भरकर लगभग 150 करेला पौध तैयार किए।

यह पहल न केवल कम लागत वाली थी, बल्कि प्लास्टिक कचरे के पुनः उपयोग के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण का संदेश भी देती है। इन पौधों को रोपित किया। आज इन 150 करेला पौधों से प्रतिदिन लगभग 20 किलोग्राम करेला उत्पादन हो रहा है। बाजार में रू. 50 प्रति किलो की दर से उन्हें प्रतिदिन लगभग रू. 700 से रू. 800 तक की आय प्राप्त हो रही है। अब तक वे केवल करेला उत्पादन से लगभग रू. 24,000 कमा चुकी हैं और वर्तमान उत्पादन को देखते हुए रू. 30,000 से रू. 35,000 तक की कुल आय की उम्मीद है। दितुड़ी बेन ने मक्का के साथ मूंगफली की मिश्रित खेती भी की है। इससे भूमि का बेहतर उपयोग होने के साथ–साथ उत्पादन और आय में वृद्धि की संभावना बढ़ी है। दितुड़ी बेन की कहानी यह दर्शाती है कि यदि सही मार्गदर्शन, सामुदायिक सहयोग और सीखने की इच्छा हो, तो सीमित संसाधनों में भी आत्मनिर्भरता प्राप्त की जा सकती है। सक्षम समूह और वाग्धारा संस्था के सहयोग से उन्होंने न केवल अपनी आर्थिक स्थिति मजबूत की, बल्कि जैविक खेती, पर्यावरण संरक्षण और टिकाऊ आजीविका का एक प्रेरणादायक मॉडल भी प्रस्तुत किया।

आज दितुड़ी बेन अपने गाँव की अन्य महिलाओं और किसानों के लिए प्रेरणा बन चुकी हैं। उनकी यह यात्रा आत्मविश्वास, मेहनत और सामुदायिक सीख का जीवंत उदाहरण है।

वनोपजों के अनुमानित भाव : नीमच मंडी में विभिन्न वनोपज के भाव नीचे दिए गए हैं –

दिनांक : 21 मई, 2026

फसल	न्यूनतम भाव	अधिकतम भाव	औसतन भाव	फसल	न्यूनतम भाव	अधिकतम भाव	औसतन भाव	फसल	न्यूनतम भाव	अधिकतम भाव	औसतन भाव	फसल	न्यूनतम भाव	अधिकतम भाव	औसतन भाव
गेंहूँ	2366	2955	2530	अलसी	6100	9561	8000	लहसुन	3800	19700	10500	इमली का फल	1800	1950	1950
मक्का	1650	2074	2000	तिल्ली	7000	10700	9500	प्याज	341	1480	800	महुआ	3800	4500	4200
जौ	2051	2551	2390	मैथी	4500	9400	8300	अश्वगंधा	10000	26800	17000	आंवला	4000	10500	10500
रागी	3200	4100	3860	धनिया	9300	13081	10500	तुलसी बीज	8000	17400	14000	उडद	4401	8500	7300
चना	4500	5825	5600	अजवाइन	7501	16100	13000	चिया बीज	4000	20500	18900	सोयाबीन	4650	7600	7400
मुंगफली	6000	9100	7100	सूखी लालमिर्च	9000	26000	16860	बहेड़ा	1100	1150	1150	रायडा	6910	7951	7400

ध्यान दें : ये भाव अनुमानित हैं और मंडी में फसल की गुणवत्ता और मांग के अनुसार बदल सकते हैं। किसी भी लेन–देन से पहले मंडी में वर्तमान भाव की पुष्टि करना आवश्यक है।

SCAN ME

अधिक जानकारी के लिये सम्पर्क करें –
वागड रेडियो 90.8 FM, मुकाम-पोस्ट कुपड़ा, वाग्धारा केम्पस, बाँसवाड़ा (राज.) 327001
फोन नम्बर है – 9460051234 ई-मेल आईडी – radio@vaagdhara.org

यह "वातें वाग्धारा नी" केवल आंतरिक प्रसारण है।

संकलन एवं सहयोग : जागृती भट्ट